एम.ए.एच.आई.-01

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

एम.ए. पाठ्यक्रम
(इतिहास)

एम.ए.एच.आई. - 01 - विश्व इतिहास
(मध्यकालीन समाज एवं क्रांति का युग) - 1

एम.ए.एच.आई. -01

वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

एम.ए. पाठ्यक्रम

(इतिहास)

खण्ड-1

इकाई संख्या	पृष्ठ संख्या
इकाई 1	
यूरोप मे सामंतवाद का क्रमिक विकास	5–14
इकाई 2	
यूरोप मे मध्यकालीन राजनीतिक विचारधारा और राजनैतिक संगठन	15–35
इकाई 3	
सामंतवाद की श्रेणियां एवं स्वरूप	36–44
इकाई 4	
टर्की की राजनीति, अर्थव्यवस्था और समाज	45–56
इकाई 5	
मध्यकालीन यूरोप समाज का पतन	57–67

पाठ्यक्रम विकास समिति

प्रो. बी.एस. शर्मा, कुलपति (अध्यक्ष)

प्रो. रविन्द्र कुमार
निदेशक, नेहरू स्मारक संग्रहालय एवं
पुस्तकालय, नई दिल्ली

प्रो. बी.आर. ग्रोवर
पूर्व निदेशक, भारतीय इतिहास
अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

प्रो. एस.पी. गुप्ता
इतिहास विभाग, अलीगढ़ मुस्लिम
विश्वविद्यालय, अलीगढ़ (उ.प्र.)

प्रो. जे.पी. मिश्रा
पूर्व इतिहास विभागाध्यक्ष, काशी हिन्दू
विश्वविद्यालय, वाराणसी (उ.प्र.)

प्रो. के.एस. गुप्ता
इतिहास विभाग, मोहन लाल सुखाड़िया
विश्वविद्यालय, उदयपुर (राज.)

डा. बृजकिशोर शर्मा
विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग कोटा
खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

डा. कमलेश शर्मा
इतिहास विभाग, कोटा खुला
विश्वविद्यालय, कोटा

डा. याकूब अली खान
इतिहास विभाग कोटा खुला
विश्वविद्यालय, कोटा

पाठ्यक्रम निर्माण दल

डा. तेन कुमार माथुर
रीडर, इतिहास विभाग, महर्षि दयानंद
सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर(राज.)

डा. एल.पी. माथुर
पूर्व विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग
मोहन लाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय
उदयपुर (राज.)

डा. बी.एल. आदनी
रीडर, इतिहास विभाग अलीगढ़ मुस्लिम
विश्वविद्यालय, अलीगढ़ (उ.प्र.)

पाठ्यक्रम प्रभारी एवं सम्पादक

डा. बृजकिशोर शर्मा
विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग कोटा खुला विश्वविद्यालय, कोटा (राज.)

अकादमिक एवं प्रशासनिक व्यवस्था

प्रो.(डॉ.) नरेश दाधीच	प्रो.(डॉ.)बी.के. शर्मा	योगेन्द्र गोयल
कुलपति	निदेशक(अकादमिक)	प्रभारी अधिकारी
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा	संकाय विभाग	पाठ्य सामग्री उत्पादन एवं वितरण विभाग

पाठ्यक्रम उत्पादन

योगेन्द्र गोयल
सहायक उत्पादन अधिकारी,
वर्धमान महावीर खुला विश्वविद्यालय, कोटा

पुनः उत्पादन - Oct 2012 MAHI-01/ISBN No.-13/978-81-8496-260-4

इस सामग्री के किसी भी अंश को व. म. खु. वि., कोटा की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप मे 'मिमियोग्राफी' (चक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यत्र पुनः प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

व. म. खु. वि., कोटा के लिये कुलसचिव व. म. खु. वि., कोटा (राज.) द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।

इकाई- 1

यूरोप में सामन्तवाद का क्रमिक विकास

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य
1.1 प्रस्तावना
1.2 यूरोपीय सामन्तवाद की परिभाषा
1.3 सामन्तवाद की उत्पत्ति और उसका क्रमिक विकास
  1.3.1 ऐतिहासिक परिप्रेक्ष
  1.3.2 जागीरदारी की उत्पत्ति
  1.3.3 माफी भूमि की उत्पत्ति
1.4 यूरोप में सामन्तवादी प्रथा का विस्तार
1.5 सामन्ती जोत के सिद्धान्त
  1.5.1 नियमित अधीनता और स्वामी-भक्ति
  1.5.2 उत्तराधिकार
  1.5.3 ज्येष्ठाधिकार
  1.5.4 महिला उत्तराधिकार और प्रतिपाल्यता
  1.5.5 उप-सामन्तवाद
  1.5.6 राहत और सहायक साधन
  1.5.7 स्वामी-भक्ति का बेचान
1.6 सारांश
1.7 अभ्यासार्थ प्रश्न
1.8 संदर्भ ग्रन्थ

1.0 उद्देश्य:

इस ईकाई का मुख्य उद्देश्य आपको सामन्तवादी प्रथा, यूरोप में उसकी उत्पत्ति व विकास सामन्तवाद से व्यवस्थाओं की जानकारी प्रदान करना है ।

1.1 प्रस्तावना:

सन्, 1818 में एम. हेलम (M. Hallam) ने अपनी कृति ' View of the state of Europe during the Middle Ages' प्रकाशित की और उसमें मध्यकालीन समाज की व्यवस्था को सामन्तवादी (Feudum) बताया । इससे पूर्व फ्रांस में राष्ट्रीय असेम्बली ने 14 जुलाई, 1789 में बास्तिल के पतन के बाद घोषित किया था कि " सामन्तशाही शासन पूर्णतया नष्ट हो चुका है ।"

तब से बड़ी संख्या में विद्वान् सामन्तवाद, उसकी उत्पत्ति, विकास, विभिन्न शाखाओं एवं अन्ततोगत्वा उसके पतन के कारणों के विवेचन में लग गये । इतिहासकारों द्वारा जागीरदारी, माफी भूमि तथा जमींदारियों के विकास के साथ समीकरण करते हुए सामन्तवादी विशेषताओं का विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है ।

1.2 यूरोपीय सामन्तवाद की परिभाषा (Feudalism)

दीर्घकाल से सामन्तवाद की परिभाषा करना दुरूह हो गया । यह शब्द सामान्यत: आधुनिक प्रचलन का है । पारम्परिक सिद्धान्त के अनुसार यह शब्द कानूनी शब्दावली में "सामन्तवाद" "फियुडम" (Feudum) का द्योतक है जो सैनिक संगठन के सार्वभौम सिद्धान्त में निहित है ।

इस प्रकार इस शब्द का बहुत सरल विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि सामन्तवाद का इतिहास मुख्य रूप से सामन्तों (Barons) एवं नाइटो (Knights) के सेवा-अनुबन्धों की कहानी है । इन अनुबन्धों की उत्पत्ति का निरूपण करने वाले वैधानिक इतिहासकार, मध्य युग की प्रारम्भिक शताब्दियों की सैनिक आवश्यकताओं ने जमींदारी व्यवस्था के साथ नाइटों की फीस के भुगतानों के अस्तित्व का वर्णन करके ही संतुष्ट हुए ।

सामन्तवाद का सैनिक सेवाओं के साथ समीकरण करना सामन्तवाद के इतिहास को एक तत्व तक संकुचित करना है । इसके इतिहास एवं विषय के विस्तृत क्षेत्र को, जिसे समाजवेत्ता अधिक विस्तृत आधार पर गूंथना चाहते हैं, वंचित करना है । अपनी सृजनावस्था में जहां अंग्रेज और जर्मन विद्वानों ने राजतंत्र के पतन, सैनिक जागीरों की स्थापना, उनके स्वरूप तथा संगठन पर न्यायोचित एवं विद्वता पूर्ण ओज का प्रयोग किया, वहां दूसरी विचारधारा के मानने वालों ने सामन्तवाद को राज्य के सन्दर्भ में वर्ग-शासन के संचालक, वस्तु-विनिमय को सामन्तवाद की सम्पन्नता, सामान्तीय अर्थ-व्यवस्था को पूंजीवाद की प्रारम्भिक घटना के रूप में माना है । सारांश में इस प्रकार के दृष्टिकोण महत्वपूर्ण हैं, परन्तु वे केवल समस्या के इर्द-गिर्द घूमते हैं और अक्सर समाजवेत्ताओं को मद्दे भँवरजाल या पांखड पूर्ण भ्रम की तरफ ललायित करते हैं ।

भ्रमजालों से बचने के लिये कुछ विद्वानों ने इस शब्द की परिभाषाएँ दी ही नहीं, उन्होंने केवल सामन्तवाद की विशेषताओं एवं इसके सामान्य तत्वों पर ही जोर दिया है । फिर भी, कुछ विद्वानों ने इसे परिभाषित करने का साहस किया है ।

इस प्रकार जोजेफ आर. स्ट्रेयर (Joseph R. Strayre) और रशटन कोलबोर्न (Rushton Coulbourn)- (Feudalism in History) के अनुसार सामन्तवाद मुख्य रूप से एक प्रशासकीय व्यवस्था थी न कि आर्थिक या सामाजिक । हालांकि बाद में इसमें प्रत्यक्ष रूप-भेद हो गया और सामाजिक और आर्थिक वातावरण से इसका रूपान्तरण भी हो गया । उन्होंने आगे बताया कि अन्य राजनीतिक संस्थाओं की भाँति सामन्तवाद लगातार विकासोन्मुख रहा । अत: एक स्थैतिक परिभाषा को "सामन्तवाद की उत्पत्ति कई विशेष चुनौतियों के उत्तर के रूप में हुई" में निहित भावना को जोड़कर परिवर्द्धित किया गया ।

स्ट्रेयर (Strayer) के अनुसार यह एक प्रशासकीय व्यवस्था थी जिसमें सामन्तों में सरकार के प्रमुख कार्य करने के अधिकार निहित थे । परन्तु स्ट्रेयर ने केवल पश्चिमी यूरोप के संदर्भ में यह बात कही ।

कार्ल स्टीफेन्सन (Carl Stephenson) - (Mediaeval Feaudalism) ने भी इसी प्रकार के मनोभाव व्यक्त किये जब उसने फर्डीनेन्ड जोट (Ferdinand jot) के तर्क की पुष्टि की, जिसने स्वीकार किया है कि इतिहास में यह एक बोलने का स्वीकृत प्रचलन हो गया है कि हर व्यक्ति जागीरदारी की बजाय सामन्तवाद की बात उस दृष्टिकोण से करता है जबकि कतिपय अपवादों को छोड़कर जागीरदार बिना जागीर के होते ही नही थे । उनके अनुसार, सामन्तवाद से हमारा अभिप्राय सही अर्थों में उस विशेष जागीरदारों के संघ से है जिसके पास जागीरें थीं और जिसका विकास कैरोलिंगियन (Carolingian) शासनकाल में हुआ तथा तत्पश्चात यूरोप के अन्य भागों में फैला । जहाँ तक यह संघ सरकारी प्रयोजनों से प्रभावित हुआ, सामन्तवाद निश्चित रूप से राजनीतिक था ।

मार्क ब्लोच (Mark Bloch) ने मध्य युगीन सामन्तवाद के स्वीकृत पक्ष के सिद्धान्तों को स्पर्श करती हुई परिभाषा के सर्वोत्तम समन्वयकारी दृष्टिकोण को अपनाया है । इनमें मुख्य कृषक- रैयूयत, बहुतायत में वेतन के बजाय जागीरों का उपयोग, एक विशेषज्ञ योद्धाओं के वर्ग की संरक्षकता, मानव को मानव से बांधने वाली आज्ञाकारिता एवं सत्ता का विकेन्द्रीकरण और इन सब के मध्य दूसरे प्रकार के संघों का यथा, परिवार और राज्य का जीवित रहना था ।

मार्क ब्लोच (Feudal Society) की परिभाषा ने अब तक कतिपय आमान्य तथ्यों को उजागर किया । उसने पूर्ण विश्वास के साथ कहा कि जागीर केवल एक मूल तत्व है यद्यपि समस्त स्थिति में यह तत्व बड़ा ही महत्वपूर्ण है । जागीर की स्थिति अधीनस्थ होने के उपरान्त भी एक समाज सामन्तवादी हो सकता है । उसके अनुसार जागीरदारी भूमिपति और एक मनुष्य के बीच सम्बन्ध था जो सामन्तवाद में एक सारभूत तत्व था ।

ब्लोच ने आगे यह स्वीकार किया कि संस्थाओं का निर्माणकारी ढांचा जो समाज को संचालित करता है अन्ततः केवल सम्पूर्ण मानव समाज के वातावरण के ज्ञान द्वारा समझा जा सकता है । उनका मत है कि सामाजिक वर्गीकरण मानव द्वारा सृजित विचारों के अंतिम विश्लेषण में निहित है ।

1.3 सामन्तवाद की उत्पति और उसका क्रमिक विकास-

1.3.1 ऐतिहासिक परिपेक्ष:

सामन्तवाद ने असीम संकटग्रस्त युग में जन्म लिया और कुछ मापदंडों के अनुसार यह उस युग के संकटों का सृजन था । सातवीं और आठवीं शताब्दियों में संकटग्रस्त पश्चिमी समाज को दक्षिण में अरबों से, पूर्व में हंगरीवालों से और उत्तर में स्केन्डीनेविया वालों से संकट उतन्न हो गया था । नवी शताब्दी के मध्य तक पश्चिमी यूरोप और ब्रिटेन को थम्पू (Thampu), योन (Yonne), यूरी (Euril), लोयर (Lorie) इत्यदि नौ परिवहनों द्वारा पार कर लिये गये । कैरोलिगियन काल ने चार्ल्स मार्टल (Charles Martel) पेपिन् (Pepin) और शार्लमेन

(Charlemagne) जैसे प्रतिभाशाली शासकों को उत्पन्न किया जिन्होंने पश्चिमी विश्व को एकीकृत साम्राज्य की अवधारणा प्रदान की ।

इस काल में तथा इसके पूर्व काल में जागीरदारी अज्ञात नहीं थी परन्तु कालान्तर में जिस प्रकार उसे निर्दिष्ट किया गया उससे भिन्न रूप में थी । हम "प्रीकेरियम" (Precarium) सर "प्रीकेरिया" (precarium) के बारे में सुनते हैं, जिसका अर्थ किसी के द्वारा अनुदानित जमीन अनुदानकर्ता के प्रसादकाल तक ही किसी के पास रहती थी । प्रचलित रोमन कानून (Roman Law) के अन्तर्गत इस प्रकार की जागीर किसी भी समय समाप्त की जा सकती थी । परन्तु कालान्तर में पश्चिमी यूरोप के फैंकिश राजतन्त्र (Frankish Kingdom) में भाड़े के भुगतान या निर्धारित सेवा के बदले में अनेक वर्षों या आजीवन के लिये जागीर वैध अधिकार बन गया ।

1.3.2 जागीरदारी की (Vassalage) उत्पत्ति:

सामन्तवाद से घनिष्ठ सम्बन्धवाली कतिपय संस्थाओं का उदय यूरोप के विभिन्न भागों में भिन्न-भिन्न समय में हुआ । मेर्सोवेंगियन फ्रेंकों (Merovingian Franks) के अधीन गोल प्रदेशों में सातवीं शताब्दी में सर्वप्रामि जागीरदारी दृष्टिगोचर हुई । इंग्लैंड में तो यह बहुत बाद में आई ।

पूर्ण संकटकाल में गरीब और निर्बल लोग राज्य के संरक्षण पर निर्भर नहीं रह सकते थे अत: उन्होंने शक्तिशाली स्थानीय रईसों का संरक्षण प्राप्त कर लिया । ये लोग रईसों. की कृपा पर आश्रित हो गये या जैसा कि. जर्मन भाषा में कहा जाता था, उनकी 'मुन्डेबर्डिस' (Mundedurbis) या दया के अधीन हो गये । संरक्षक ने अपने आसमियों को सुविधापूर्ण स्थिति में रखने का समझौता किया । उन्हें संरक्षण प्रदान किया, उनके कानूनी मुकदमों को लड़ने और युद्ध में उनके नेतृत्व का वायदा किया । संरक्षक को "सीनियर" (Senior) सम्बोधित किया जाने लगा और आसामी "वास्स" (Vassus) कहलाने लगे । आसामी गुलाम नहीं था पर वह स्वेच्छा से आश्रित था । आसामी डयूक्स, (Dukes) काउन्टसू (Counts) रॉयल ऑफिसरसू (Royal Officers') या राज्य कर्मचारियो, और राजा तक का 'वासल' (Vassal) भी बन सकता था । अंतिम परिस्थिति में राजा अपने जागीरदारों पर दुहरी सत्ता जता सकता था- प्रथम सार्वजनिक सत्ता राजा के रूप में, और द्वितीय एक विशेष संरक्षणकर्ता के रूप में ।

व्यक्ति राज्य के अधीनस्थ होने के स्थान पर अब राजा का व्यक्तिगत अधीनस्थ हो गया । राज्य की जनसंख्या व्यक्तियों के समूहों के एक दूसरे के निजी सम्बन्धों के आधार पर गठित होने लगी । इस प्रकार व्यक्ति की अधीनस्थता ने आगे चलकर भूमि की अधीनस्थता का मार्ग प्रशस्त किया ।

इन जोतों का क्या स्वरूप था ? गॉल के क्षेत्र में ग्रामीण क्षेत्र बड़ी जागीरों में विभाजित थे जिन्हे "विला" (Villae) कहा जाता था । इंग्लैंड में जमींदारी या ' 'मैनोरियल' ' (Manorial) प्रथा के अस्तित्व के आगमन को समानान्तर स्थिति देखा जा सकता है । ' 'विला' ' की भूमि दो भागों में बंटी हुई थी । प्रथम भाग तो मालिक के मकान की आसपास की जमीन थी, जिस

पर वह स्वयं खेती करता था । दूसरा भाग कई जोतों में बंटा हुआ था जिन्हें स्वामी अपने गुलामों या स्वतंत्र व्यक्तियों को कृषि के लिये देता था ।

हर कृषक-मजदूर अपने जोत के क्षेत्र पर स्वयं के लाभार्थ कृषि करता था पर इसके बदले वह मालिक को अनिवार्य रूप से किराया देता था तथा नियत सेवायें भी अर्पित करता था । एक "विला" अपने आप में आत्मनिर्भर था । कृषकों के अतिरिक्त वहाँ श्रमिक और कारीगर भी थे जो औजार और उपकरण बनाते थे व उनकी मरम्मत करते थे । "विला" में एक मिल, एक शराब भट्टी, एक लोहा गर्म करने की खुली भट्टी और एक छोटा गिरजा होता था । "विला" के आस-पास के जंगल भूस्वामी के अधिकार में रहते थे परन्तु वह कृषक-मजदूरों को किराये पर उसके उपयोग का अधिकार देता था ।

1.3.3. माफी भूमि (benefice) की उत्पत्ति-

बड़े शक्तिशाली भूमिपतियों की भू-सम्पति के साथ साथ स्वतंत्र व्यक्तियों की छोटी भू-सम्पतियॉ भी थीं । आठवीं शताब्दी के दौरान ये स्वतंत्र व्यक्ति लगातार इन छोटी भूसम्पतियों की रक्षा करने में बड़ी कठिनाई अनुभव कर रहे थे । उनका विक्रय समस्या का समाधान नहीं था

क्योंकि उनको बेचने से अधिकर प्रमाण पत्र वाली कीमत ही मिल सकती थी । इसलिए उन्होंने अपने आपको पास में रहने वाले शक्तिशाली भूमिपतियों के हवाले कर दिया ।

शक्तिशाली भूमिपतियों ने इन मुक्त अथवा छोटे भू-सम्पतिधारियों को अपने जीवनकाल में जमीन पर खेती करने का अधिकार प्रदान किया । यह माफी भूमि, जिसे ' 'बेनिफिस' कहते थे, इसका अर्थ था कि छोटे भूमिपति इस जमीन को अनुग्रह के रूप में रखते थे । इस प्रकार इस भूमि का अनुग्रह के रूप में स्वीकार करना अपनी स्वतंत्रता को बेचने के समान था । इस प्रकार की माफी भूमि, पूर्ण स्वामित्ववाली या ' 'अलोडियल' ' (Allodial) भूमि से भिन्न थी जो शक्तिशाली भूमिपतियों के पास माफी भूमि त्वरित गति से बढने लगी । चर्च ने, जिसके पास बड़ी भू-सम्पति थी जिस पर वह खुद अपने ' 'सर्फ' ' (Serf) कृषकों द्वारा खेती कर सकता था, उसमें से कुछ भाग स्वतंत्र व्यक्तियों को किराए पर देने की प्रथा आरम्भ करी । इस पर स्वतंत्र व्यक्ति कृषि करते थे । कृषक की मृत्यु पर यह भूमि अच्छी हालत में चर्च को वापस लौटाई जाती थी । इस प्रकार की जोत (Precarium) रोमन कानून को पूर्व में ज्ञात थी । कुछ दशाओं में अनुदानगृहीता इस प्रकार के अनुदान के बदले में उसी कीमत की भूमि चर्च को उपहार के रूप में भेंट करता था । अपने जीवन काल में वह दोनों जमीनों को जोतता था पर उसकी मृत्यु के बाद दोनों ही जमीनें चर्च के हाथों चली जाती थी । यह व्यवस्था दोनों पक्षों को उचित लगती थी । अनुदानगृही अपने जीवनकाल में दुहरी आमदनी का आनन्द लेता था और अनुदानगृही की मृत्यु पर चर्च की सम्पत्ति दोगुनी हो जाती थी । इस प्रकार पूर्ण स्वामित्व वाली जमीनें धीरे-धीरे अदृश्य हो गई और बड़े भूमिपतियों व चर्च की माफी भूमि प्रति दिन बढ़ती गई ।

अनुदानगृहीता अपने अनुदानकर्त्ता के आभार के बन्धन के जकड़े रहते थे । वे अनुदानकर्ता की निष्ठापूर्वक सेवा करते थे और उनके साथ रण-क्षेत्र में, प्रमाण करते थे ।

भूमिपतियों की शक्ति के विस्तार के साथ-साथ उन्होंने उसमें आगे वृद्धि करने के लिये और भूमि अनुदान के रूप में प्रदान की । राजा को इन भूमिपतियों व उनके अनुचरों की सेवा की आवश्यकता पड़ी और उसने इनकी स्वामी-भक्ति जीतने के लिये और जमीनें अनुदान में प्रदान की । राजाओं ने चर्च की सम्पत्ति को भी हथियाने का प्रयास किया पर चूंकि चर्च की सम्पत्ति तत्कालीन कानून के अनुसार हस्तांतरण योग्य नहीं थी इसलिये उसको सर्वथा रूप से अनुदानगृहीता द्वारा पूर्णत: अपने अधिकार में नहीं लिया जा सका ।

राजाओं द्वारा चर्च भू-सम्पति को योद्धाओं में वितरण करने का एक अन्य कारण यह था कि योद्धाओं के खर्चे बहुत भारी थे । योद्धाओं में केवल पैदल सैनिक ही नहीं थे वरन् सशस्त्र अश्वारोही भी थे और अश्वारोही सेना की सामग्री बड़ी महँगी थी । जो भू-राजस्व योद्धाओं को स्वीकृत किया जाता था वह सैनिक सेवा के बदले में हर्जाने के रूप में होता था । इस प्रकार यह माना जाने लगा कि कृतियों आदि को जमींदारी के साथ सैनिक सेवा करना अनिवार्य है । इस तरह सभी भूपतियों भू-सम्पत्ति अनुदान भोगियों के लिये अनुदानकर्ता के साथ रणक्षेत्र में जाना आवश्यकत कर्त्तव्य हो गया । इस प्रकार आठवीं शताब्दी की माफी भूमि ग्यारहवीं शताब्दी की जागीर प्रथा (फीफ) Fiel की प्रत्यक्ष अग्रगामी बन गई ।

जागीर (फीफ) की दूसरी विशेषता यह थी कि इसको धारण करने वाला अपनी जागीर में राज्य की सभी शक्तियों का प्रयोग करता था । वह कर लगाता था, न्याय करता था जागीर के लोगों को युद्ध में भाग लेने के लिये बुलाता था ।

कुछ जागीरदार तो इतने शक्तिशाली हो गये कि उन्होंने अपनी जागीरों में सरकारी अधिकारियों के आगमन को एवं उनके द्वारा किसी प्रकार की अधिकार जताने की प्रवृत्ति को स्वंय राजा प्रतिबंधित करने के लिए को बाधित कर दिया । यद्यपि आठवीं शती में सामन्तवाद के सभी आवश्यक तत्व जैसे कि स्तुति करना, माफी भूमि और उन्मुक्ति मौजूद थे, पर वे केवल नवीं शताब्दी में जाकर ही व्यवस्थित स्वरूप प्राप्त कर सके ।

1.4 यूरोप में सामन्तवादी प्रथा का विस्तार:

दसवीं शताब्दी में राजतंत्र के पतन के बाद पश्चिमी यूरोप एक अनिश्चितता की स्थिति में आ गया । जिस साम्राज्य को शार्लमेन ने संगठित करने का प्रयास किया था, उसका स्वरूप हिल रहा था' । स्थानीय सरदारों और उनके अधिकारियों के बीच घनिष्ठता, शार्लमेन और उसके अधिकारियों के बीच घनिष्ठता से कहीं अधिक दृढ़ थी । शार्लमेन के पश्चात् यह व्यवस्था भी धराशायी हो गई और पश्चिमी विश्व में केन्द्रीय सत्ता समाप्त हो गई ।

बाहय आक्रमणों व आन्तरिक कलहों का सामना करते हुए स्थानीय सरदारों ने अधिक स्वतंत्रता धारण कर ली । पर वे तदनुसार अपने घर-बार व परिवार की सुरक्षा के विकट कार्य एवं अपने अधिकारियों को सुरक्षा प्रदान करने के कार्य में व्यस्त हो गये । यह यूरोप में सामन्तवाद की उत्पत्ति थी ।

इतिहासकारों ने यूरोप में सामन्तवाद के दो पृथक् चरणों का निरूपण किया ' है । प्रथम चरण ग्यारहवीं शताब्दी तक रहा जबकि दूसरा चरण तेरहवीं शताब्दी तक चलता रहा जिसके बाद यूरोप में सामन्तवाद पतनोन्मुख हो गया ।

यूरोप को पुन: आबाद करना, दूरियों का कम होना, व्यापार की समृद्धि में रत शहरी मध्यम श्रेणी का उदय जैसे विषयों के सन्दर्भ में सामन्तवाद का द्वितीय चरण, प्रथम चरण से अधिक महत्वपूर्ण और भिन्न था । राजा भी व्यापार और वाणिज्य को प्रोत्साहित करते थे क्योंकि इससे उन्हें कर और चुंगी के रूप में अधिक धन प्राप्त होता था ।

कपड़ा एक महत्वपूर्ण निर्यात की वस्तु हो गई । फलेन्डर्स (Flanders), पिकार्डी ' (Picardy) , लोम्बार्डी (Lombardy), इत्यादि स्थान वस्त्र केन्द्र के रूप में उभरने लगे ।

रूस के व्यापारिक मार्ग बंद कर दिये गये और उनके स्थान पर बाल्टिक सागर व पश्चिमी तट के बन्दरगाहों के उपयोग में रूचि बढ़ने लगी ।

इस आर्थिक क्रांति के आगमन के साथ सामाजिक मूल्यों में भी परिवर्तन का दौर आया । कारीगर और व्यापारी समाज के लिये अपरिहार्य बन गये । इस प्रकार मध्यकालीन अर्थव्यवस्था पर व्यापारियों का, न कि उला उत्पादकों का, प्रभुत्व स्थापित हो गया ।

उत्तरकालीन सामन्तवाद, जोत के क्षेत्रों की समितियों का एक सिलसिला सा बन गया । स्थानीय अब भी महत्वपूर्ण कार्य निपटाता था किन्तु वह उच्च सत्ता से निर्देशित व नियंत्रित' किया जा सकता था ।

1.5 सामन्ती जोत (Feudal Tenure) के सिद्धान्त:

अब हम सामन्तीय जोत को निर्धारित करने वाली विशेषताओं के नियत सिद्धान्तों पर संक्षेप में दृष्टिपात करते हैं ।

1.5.1 नियमित अधीनता और स्वामी-भक्ति:

सिंहावलोकन काल के अन्तर्गत एक ऐसी स्थिति आई कि जब राज्य और परिवार कोई सुरक्षा प्रदान नहीं कर सकते थे । ग्रामीण समुदाय अपने को सुरक्षित रखने में असक्षम था और शहरी समुदाय बहु त ही कम संगठित था । (यह सामन्तवाद का प्रथम चरण था) ऐसी परिस्थितियों में निर्बल लोग शक्तिशाली (स्थानीय सरदार) के साये में चले गये जबकि शक्तिशाली व्यक्तियों ने अपनी स्थिति को बनाये रखने में अपने अधीनस्थों का सहारा लिया । इस प्रकार एक शक्तिशाली आदमी रक्षक और रक्षित दोनों था ।

प्रमुख ने अपने मातहतों का भार ग्रहण किया और इस प्रकार वह उनका संरक्षक बन गया । अधीनस्थों ने अपने आपको सुपुर्द कर दिया । यह आभार 'सेवा' के नाम से जाना जाने लगा । राजा ने भूमिपतियों को उनके मातहतों की निष्ठा के लिये उत्तरदायी बनाया । अब सवाल रहा प्रमुख की राजा के प्रति स्वामी-भक्ति का इस समस्या ने राजा को अपने भूस्वामियों की निष्ठा सुनिश्चित करने के लिये भूमि अनुदान में देने के लिये प्रेरित किया ।

मातहत व्यक्तियों ने अपने स्वामियों से कुछ और (खाने-पीने के साधनों आदि की) अभिलाषा की। प्रमुख अपने संरक्षक को अपने मकान पर रखता था, खाना-कपड़ा देता था, देख-भाल करता था या जीवीकोपार्जन के लिये उसको भूमि-प्रदान करता था । इस प्रकार प्रदान की गई भूमि पुरस्कार की अपेक्षा वेतन के रूप में अधिक थी । इस व्यवस्था से प्रत्यक्ष लाभ यह था कि भू-सम्पति बिना किसी गंभीर अड़चन के भूमिपति को वापस उसी स्थिति में लौटाई जा

सकती थी । (यह उस समय थी जब पैतृक और उत्तराधिकार कानून प्रचलन में नहीं थे) इस प्रकार यह अनुदान जागीर-प्रथा (फीफ) की उत्पति थी । आधारभूत रूप से यह एक आर्थिक अवधारणा थी । जागीर का प्रदान करना कुछ देने के रूप में आभार नहीं था पर यह एक कुछ करने के रूप में दायित्व था । इतना ही नहीं जागीर केवल सेवा का दायित्व ही नहीं था पर इसमें व्यवसायित विशेषज्ञता के सुनिश्चित तत्व एवं व्यक्तिगत प्रक्रिया भी अन्तग्रस्त थी । यह एक वृत्तिकाग्राही आभुक्ति थी ।

1.5.3 उत्तराधिकार:

नवीं शताब्दी के अन्त में पिता से पुत्र को उत्तराधिकार में जागीर मिलना प्रथागत बन गया । दसवीं शताब्दी तक यह एक स्वीकृत तथ्य बन गया । किसी पूर्व जागीरदार की मृत्यु हो जाने पर जागीर का कब्जा स्वत: ही किसी दूसरे को नहीं मिलता था । परन्तु कुछ प्रबल रूप से निर्धारित परिस्थितियों के अतिरिक्त भूमिपति जागीरदार को उसके वास्तविक उत्तराधिकारी को दीक्षित करने को मना नहीं कर सकता था बशर्ते उस उत्तराधिकारी ने पहले नियमित अधीनता स्वीकार की हो । इस अर्थ में वंशानुगत सिद्धान्त की विजय लुप्तमान अधिकारों पर सामाजिक शक्तियों की विजय थी ।

1.5.3 ज्येष्ठाधिकार (Primogeniture)

वैध रूप से जागीर (फीफ) अविभाज्य थी । पितृदाय सम्पति के विघटन से सेवायें प्रदान करने में संभ्रान्ति पैदा हो सकती थी । और विभिन्न सहभागियों के बीच संतोषजनक रूप से सेवाओं का अनुभाजन करना बहुत कठिन कार्य था । इस प्रकार ज्येष्ठाधिकार नियम को सामन्ती अवधि को निरन्तरता प्रदान करने के लिये व्यावहारिक विनिमय की तरह अपना लिया गया ।

परिवार के कनिष्ठ बच्चों के हितार्थ एक रिवाज अस्तित्व में आया जिसे पेरेज (Parage) कहते थे। इसके अन्तर्गत एक जागीर कई सह-उत्तराधिकारियों में विभाजित की जा सकती थी बशर्ते उनमें से किसी एक ने सबकी तरफ से नियमित अधीनता स्वीकार की हो ।

1.5.3 नाहला उत्तराधिकार और प्रतिपाल्यता (बार्डशिप Wardship):

इस विचारवस्तु से सम्बन्धित एक विचित्र समस्या पैदा हुई कि उस दशा में क्या होगा जब कि उत्तराधिकार के लिये कोई पुरुष उत्तराधिकारी न हो तथा केवल किसी घराने की लड़की या लड़कियाँ ही उपलब्ध हों ? एक महिला द्वारा किसी अदालत को लगाने का दृश्य यथार्थ में विघ्न पैदा करने वाला नहीं था पर क्योंकि महिलायें हथियारों से लैस होने में असमर्थ थीं इसलिये उनके पति ही जागीर में शक्तियों के प्रयुक्त करने वाले माने जाते थे ।

प्रतिपात्यता (वार्डशिप) एक अल्पवयस्क उत्तराधिकारी की स्थिति में एक स्वीकृत प्रस्ताव था । यद्यपि प्रतिपाल्यता (वार्डशिप) जिसने अल्पकालिक जागीरदारी की स्थिति पैदा की, वहीं यह जागीरदारी के मूल स्वरूप या उसके सम्बन्धों पर आघात करने की ओर भी प्रवृत हुई ।

1.5.5 उप-सामन्तवाद (Sub-infeudation)

उप-सामन्तवाद की प्रथा यूरोप में विद्यमान व्यवस्था से प्रमाणित थी और यह चरण ब चरण रिसती हुई जमीन जोतने वाले के स्वयं की गिरफ्त में होती जा रही थी, जो एक कृषक-दास या दास था ।

1.5.6 राहत और सहायक साधन:

पैतृक उत्तराधिकार, अधिकार का रूप लेने से पूर्व एक अनुग्रह के रूप में माना जाता था और एक नया जागीरदार अपने भूमिपति को उपहार देकर आभार प्रकट करता था । आवश्यक रूप से रीति-रिवाजों पर आधारित सामन्ती ढांचे में प्रत्येक स्वैच्छिक उपहार का अन्ततः एक आभार में रूपान्तरण हो गया । जागीरदार का उत्तरदायित्व केवल सैनिक सेवा तक सीमित नहीं था इसलिये वह विभिन्न अवसरो, त्यौहारों व अन्य पर्वों पर अपने भूमिपति को राहत प्रदान करता था ।

1.5.7 स्वामी-भक्ति का बेचान (अन्य संक्रामण):

क्योंकि अनुदान की मौलिक संदिग्ध प्रकृति का प्रभाव समाप्त हो गया, जागीरदार धन की आवश्यकता अथवा उदारता के कारण अपनी भूमि को माफी भूमि के रूप में प्रदान करने की ओर अधिकाधिक अग्रसर होने लगे ।

1.6 सारांश

मध्यकालीन यूरोप के समाज के विकास के विभिन्न चरणों में सामन्तवाद सर्वाधिक महत्वपूर्ण द्योतक चिन्ह था । नवीं शताब्दी के आसपास में उदित, केन्द्रीय सत्ता में पतनावस्था के साथ यह करीब चार शताब्दियों तक क्रियान्वित रही जिसके बाद इसका पतन प्रारम्भ हो गया । यह उन निश्चित विशेषताओं से विभूषित थी जो सामन्तवाद् के पतन के बाद भी चिरस्थायी रही ।

1.7 अभ्यासार्थ प्रश्न:

1. यूरोप में सामन्तवाद की उत्पत्ति और विकास का निरूपण कीजिए ।
2. मध्यकालीन यूरोप की सामन्तवादी संस्थाओं की प्रमुख विशेषताएँ क्या थीं ?

1.8 संदर्भ ग्रन्थ:

1. Marc Bloch Feudal Society, London, 1961
2. Rushton Coulbourn:Feudalism in History, New York, 1956
3. F.L. Ganshof Feaudalism,London, 1952
4. F.Lot:: The End of the Ancient World and the Beginning of Middle Age.1931
5. Cart Stephenson Mediaeval Feudalism, New York, 1961

6. Max Weber: The theory of Social and Economic Oranisation,-London,1964
7. The Cambridge Mediaeval History, volume 11. Cambridge University Press,1913.

इकाई-2

यूरोप में मध्यकालीन राजनीतिक विचारधारा और राजनीतिक संगठन

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना:

मध्य युग के आगमन के समय यूरोप की राजनीतिक व्यवस्था

2.2 सामंतवाद के उद्भव के विषय में विभिन्न धारणाऐं

2.2.1 बूनर की धारणा

2.2.2 पीरेन का मत

2.2.3 मार्क ब्लाच की धारणा

2.2.4 पेरी एंडरसन के विचार

2.3 सामंतवाद का स्वरुप

2.3.1 सामंतवाद के विभिन्न घटक

2.3.2 राजा व सामंतों के पारस्परिक सम्बन्ध

2.4 मध्यकालीन युग में विभिन्न देशों में राजतंत्र की प्रगति

2.4.1 पश्चिम फांस

2.4.2 पूर्वी फ्रेंकिश राज्य-जर्मनी

2.4.3 इंगलैंड

2.4.4 स्केन्डनेविया

2.2.5 स्पेन

2.2.6 इटली

2.2.7 रूस

2.5 सामंतवाद के पराभाव के कारण

2.6 राष्ट्रीय राज्यों के उदय के कारण

2.7 निष्कर्ष: मध्य युग में राजनीतिक संगठन व विचारधारा के प्रमुख

2.8 अभ्यास के लिए प्रश्न

2.9 संदर्भ ग्रन्थ

2.0 उद्देश्य:

इस इकाई में हमारा उद्देश्य आपको मध्यकालीन युग में यूरोप की राजनीतिक विचारधारा और राजनीतिक संगठन के बारे में संक्षिप्त जानकारी देना है । इस इकाई का अध्ययन करने के बाद आपको निम्नलिखित बिन्दुओं के संबंध में ज्ञान प्राप्त हो जायेगा ।

- मध्ययुग के आगमन के समय में यूरोप की राजनैतिक व्यवस्था
- सामन्तवाद के उद्भव के विषय में विभिन्न धारणाऐं
- सामन्तवाद का स्वरूप
- यूरोप के भिन्न-भिन्न प्रदेशों में राजतन्त्र की प्रगति
- सामन्तवाद के पराभाव के कारण
- राष्ट्रीय राज्यों के उदय कै कारण
- निष्कर्ष: मध्य युग में राजनीतिक संगठन व विचारधारा के प्रमुख लक्षण

2.1 प्रस्तावना : मध्य युग के आगमन के समय यूरोप की राजनीतिक व्यवस्था

सिडनी पेन्टर के अनुसार पश्चिमी यूरोप में छठी से दसवीं सदी तक का युग प्रारम्भिक जर्मन और रोमन सभ्यताओं से मध्ययुगीन सभ्यता की ओर से जाने वाला युग था । इस काल में जर्मन जातियों ने स्थायी रूप से रहना शुरू किया तथा शासन व्यवस्था को संगठित किया । यूरोपीय इतिहासकारों ने इस शासन व्यवस्था को जर्मनिक राजतन्त्र (Germanic Monarchy) की संज्ञा दी है । फांस में यह व्यवस्था उपर्युक्त चार शताब्दियों में प्रचलित रही तथा इस काल के अन्त में स्केन्डनेविया व रूस के प्रदेशों में भी इसी प्रकार की शासन प्रणाली स्थापित हो गई थी ।

उस समय के राजा के दो प्रमुख कर्त्तव्य थे । वे अपने सैनिकों का. युद्ध में नेतृत्व करते थे तथा अपने राज्यों में पारंपरिक कानूनों का पालन कराते थे । अधिकांश राज्यों में राजा का चुनाव होता था किन्तु यह चुनाव राज्य परिवार के सदस्यों तक ही सीमित रहता था । सभी राजा अपने राज्य को पारिवारिक सम्पत्ति मानते थे । अतएव उनके राज्य का विभाजन उनके पुत्रों में ही होता था । उस समय की राजनीति पर चर्च का गहरा प्रभाव था । ईसाई धर्म को राज्य धर्म घोषित किया जाता था । चर्च के प्रभाव को मानते हुए पश्चिमी फांस के महान् सम्राट शार्लमेन ने नौवीं शताब्दी के अन्त में एक समारोह, में पोप से अपना ताज ग्रहण किया था । यद्यपि उसने तथा उसके उत्तराधिकारियों ने स्वंय को रोमन साम्राज्य का प्रतिनिधि बताया किन्तु अपनी शासन व्यवस्था में रोमन साम्राज्य की परम्पराओं को नहीं अपनाया ।

इंगलैण्ड के एंग्लो- (Anglo-Saxon) विजेताओं ने वहाँ पर अपने अपने छोटे-छोटे राज्य 'स्थापित' किये । इन प्रदेशों के राजा अपने मुख्य सहायकों की एक काऊंसिल, जिसे विटान (Witan) कहते थे, की सलाह पर राज्य करते थे । वे आपस' में एक दूसरे से लड़ते रहते थे । अपने शत्रु को हटाने के बाद या तो वे उसके राज्य को अपने राज्य में मिला लेते थे अथवा उससे अधीनता स्वीकार करा के 'वार्षिक कर वसूल करते थे । आठवीं सदी में इंग्लैण्ड तथा नौवीं में फ्रांस पर स्केन्डनेविया. के. अनेक आक्रमण हुए । इनसे इन दोनों प्रदेशों में अराजकता फैल गई । ऐसी परिस्थितियों में पहले पश्चिमी फ्रांस एवं बाद में इंग्लैण्ड तथा अन्य देशों में सामन्तवाद नामक एक नयी राजनीतिक प्रणाली का उद्भव व विकास हुआ । यद्यपि

भिन्न-भिन्न प्रदेशों में इस प्रणाली में एकरूपता नहीं पाई जाती किन्तु मध्यकालीन यूरोप में इस व्यवस्था ने एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की ।

2.2 सामन्तवाद के उद्भव के सम्बन्ध में विभिन्न धारणायें:

आधुनिक काल में यूरोप के अनेक विद्वानों ने सामन्तवादी प्रणाली के उद्भव व विकास के बारे में भिन्न-भिन्न मत प्रकट किये है । इनमें से कुछ प्रमुख विद्वानों की धारणाओं का विवेचन यहाँ पर किया गया है ।

2.2.1 ब्रूनर की धारणा:

ब्रूनर नामक जर्मन इतिहासकार ने सामन्तवाद का मूल सम्बन्ध घोड़ो से बताया है । उसके अनुसार 733 ई० में पेरिस के निकट अरब आक्रमणकारियों को हराने के बाद. फ़्रांसीसी सम्राट चार्ल्स मार्तेल उनका पीछा नहीं कर पाया क्योंकि वे दुतगामी घोड़ों पर सवार थे । अतएव उसने अपनी सेना में घुडसवार दस्ते के गठन के लिये संसाधन जुटाने आरम्भ किये । उसने ऐसी संस्थाओं, जिनमें चर्च भी सम्मिलित था, से जिनके पास भूमि अधिक थी भूमि ले ली । मार्तेल ने वेतन के स्थान पर सैनिकों को भूमि देना आरम्भ किया । इस प्रकार कूर के मत में सामन्तवाद का उदय हुआ । लेकिन एक लम्बे समय तक चलने वाली विशाल सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक संस्था के उद्भव और विकास का श्रेय घोड़े की लगाम जैसी सामान्य वस्तु को देना उचित नहीं है ।

2.2.2 पीरेन का मत:

बीसवीं सदी के तीसरे दशक में बेल्जियन इतिहासकार हेनरी पीरेन ने इस व्यवस्था के आर्थिक पहलू को महत्व देते हुए बताया कि उस समय की यूरोप की शहरी अर्थव्यवस्था का आधार दूर-दराज के देशों से व्यापार करना था । सातवीं व आठवीं सदी के अन्त में अरबों ने भूमध्य सागर के अनेक महत्वपूर्ण स्थानों पर नियन्त्रण स्थापित करके यूरोप के इस शानदार व्यापार को छिन्न-भिन्न कर दिया । इसके फलस्वरूप यूरोपीय अर्थव्यवस्था स्थानीय व्यापार और ग्रामीण संसाधनों पर आश्रित होकर रह गई । ग्यारहवीं सदी के धर्म युद्धों में इसाईयों ने अरबों को जिब्राल्टर व सार्डिनिया से खदेड़ दिया । इसके परिणामस्वरूप फिर से सुदूर क्षेत्रों से व्यापार आरम्भ हो गया और यूरोपीय अर्थव्यवस्था का शहरी रूप पुन: लौट आया । इसके साथ ही सामन्तवाद का पराभाव हो गया । इस प्रकार पीरेन ने सामन्तवाद और व्यापार के बीच द्वन्द्व विभाजन (Dichotomy) दर्शाया है ।

2.2.3 मार्क ब्लाच की धारणा:

मार्क ब्लाच (Mark Block) नामक फांसीसी इतिहासकार ने लिखा है कि पांचवीं शताब्दी में यूरोप पर जर्मन कबाईलियो के निरन्तर आक्रमणों ने विशाल रोमन साम्राज्य को ध्वस्त कर दिया । इसके बाद अरबों के आक्रमण हुए । उनके बाद हंगरी के मग्यारों और स्केन्डनेवियनों के आक्रमण हुए । इन लगातार हमलों से पश्चिमी यूरोप में असुरक्षा की भावना उत्पन्न हो गई तथा वहाँ की अर्थव्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गई । पश्चिमी यूरोप का प्रत्येक

व्यक्ति सुरक्षा व आजिविका की तलाश में लग गया । इसके फलस्वरूप परस्पर निर्भरता के सम्बन्धों का सूत्रपात हुआ । समाज के सभी वर्ग इन सम्बन्धों में भागीदार बने । कृषकों ने अपनी भूमि व अन्य संसाधन स्थानीय जमींदारों को सौंप दिये । इसके बदले में जमींदारों ने उन्हें सुरक्षा व आजीविका प्रदान करने का वचन दिया । कृषक यदि जमींदार के खेतों में बिना मजदूरी के काम करता रहे तो वह अपनी भूमि वापस ले सकता था ।

स्थानीय जमींदार ने अपनी तथा अपने कृषकों की सुरक्षा के बदले में अपनी जमीनें व संसाधन बड़े जमींदार को इस शर्त पर सौंप दिये कि यदि वह अपनी जमीनें वापस लेना चाहे तो उसे बड़े जमींदार को सैन्य सेवा प्रदान करनी होगी । इस प्रकार छोटा जमींदार बड़े जमींदार का अधीनस्थ सामन्त हो गया । इस प्रक्रिया में राजा व कृषक के अतिरिक्त हर एक व्यक्ति किसी न किसी के अधीन हो गया ।

राजा किसी के अधीन नहीं था और कृषक किसी का स्वामी नहीं था। समय के साथ-साथ इन सम्बन्धों ने स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप धार्मिक विचारधारा और सांस्कृतिक परिवेश को जन्म दिया ।

2.2.4 पेरी एंडरसेन के विचार:

पेरी एंडरसन ने इसे एक ऐसी दीर्घ प्रक्रिया माना है जो समाज के मूल में होती रही है । उसके अनुसार इस संस्था का जन्म दो सामाजिक व्यवस्थाओं के बीच कड़े संघर्ष के फलस्वरूप हुआ । एक ओर प्राचीन यूरोपियन समाज जो दासता पर आधारित था दास श्रम में कमी आ जाने के कारण कम उत्पादन और अधिक मांग की समस्याओं से घिरा हुआ था । उत्पादन व मांग में बीच अन्तर बढ़ता जा रहा था । उत्पादन बढ़ाने के बेहतर तरीके खोजने व उन्हें काम में लाने में दासों को कोई रूचि नहीं थी । इस प्रकार प्राचीन यूनानी सभ्यता संकट के दौर से गुजर रही थी । जर्मन देशों का कबाईली सामाजिक संगठन, जो समता पर आधारित था, भी एक अन्य प्रकार के संकट से गुजर रहा था । एक ओर तो सामाजिक व्यवस्था पर विभिन्न स्तरों के उदय के कारण दबाव पड़ रहा था तो दूसरी ओर रोमन सामन्तवाद का बाह्य प्रभाव भी इस पर पड़ रहा था ।

आधारित यूरोपीय समाज तथा समता पर आधारित कबाईली जर्मन समाज के मध्य हुए संघर्ष के फलस्वरूप दोनों ही समाज नष्ट हो गये और एक नये समाज का जन्म हुआ जिसका नाम था सामन्तवादी समाज ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि विभिन्न विद्वानों ने अपने विश्लेषणों में किसी न किसी एक पहलू पर विशेष बल दिया है । वास्तव में समाज के सभी स्तरों पर राजनीतिक सांस्कृतिक आर्थिक व संस्थागत तत्वों के पारस्परिक प्रभाव के फलस्वरूप ही सामन्तवाद का जन्म हुआ । इसके ऐतिहासिक स्वरूप को देखने से पता चलता है कि यह प्रणाली यूनान एवं रोम के दास-समाज एवं आज के पूंजीवादी समाज के बीच की एक व्यवस्था थी ।

2.3 सामन्तवाद का स्वरूप:

2.3.1 सामन्तवादी व्यवस्था के घटक व उनकी स्थिति:

इसमें कोई सन्देह नहीं कि यूरोप के भिन्न-भिन्न देशों में सामन्तवाद का विकास वहाँ की स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार हुआ लेकिन फिर भी हम सामन्तवाद की विशेषताओं का अध्ययन एक समग्र दृष्टि से कर सकते है ।

सिडनी पेन्टर के मत में सामन्तवादी व्यवस्था में एक ऐसे पिरेमिड (Pyramid) का निर्माण हुआ जिसमें राजा को सर्वोच्च स्थान प्राप्त था तथा उसके नीचे सामन्त व उप-सामन्त तथा कृषक होते थे । राजा अपने सामन्तों को एक क्षेत्र की भूमि का स्वामित्व प्रदान करता था । सामन्त अपने उप-सामंतों को अपने क्षेत्र में भूमि का 'अनुदान देता था । आम तोर पर राजा, सामन्त और उप-सामन्त अपने क्षेत्र की कुछ भूमि में स्वंय खेती कराते थे तथा शेष भूमि को कृषक दासों को खेती के लिये दे देते थे । इसके बदले में कृषकों को भूमि का लगान देना पड़ता था तथा उन्हें अपने ' स्वामी के खेतों व गढ़ी में उसके लिये परिश्रम करना पड़ता था । इस प्रकार सामन्तवादी व्यवस्था में दो प्रमुख घटक थे : (1) स्वामी (2) कृषक दास

(1) स्वामियों का वर्ग:

(अ) नाईट्स (Knights) : सबसे निचले स्तर के स्वामी ' 'नाईट्स' ' कहलाते थे । इन्हें सैन्य सेवा के बदले में राजा या सामन्त जागीरे देते थे । आरम्भ में ऐसी जागीरें सेवा काल के लिये दी जाती थी किन्तु धीरे-धीरे से वंशागत हो गई ।

(ब) सामन्त : एक सामन्त लगभग चार हजार एकड़ भूमि का स्वामी होता था । यह भूमि सामान्य रूप से तीन भागों डिमीन, काश्त और परती में विभक्त होती थी । पहले दो भागों में खेती होती थी । तीसरे भाग में चरागाह व जंगल होते थे जिनका उपयोग सब कर सकते थे । डिमिन व काश्त किस्म की भूमि में उत्पादन कृषक दासों द्वारा कराया जाता था । इन दो किस्मों की भूमि सामन्तों के क्षेत्र में अनेक स्थानों में फैली हुई होती थी ।

(स) बैनल (लार्ड): इनका सीधा सम्बन्ध राजा से था । इनके अधीन भूमि पर इनका पूर्ण नियन्त्रण था

(2) कृषक दास:

इनके दो वर्ग थे । पहले वर्ग में वे कृषक थे जो राजा, सामन्त बैरन, लार्ड आदि की भूमि पर कार्य करते थे । उन्हें अपने स्वामियों की गढ़ी में भी कार्य करना पड़ता था । इनकी दशा अच्छी नहीं थी । उनका अपने स्वामी के खेतों के उत्पादन पर कोई अधिकार नहीं था ।

दूसरे वर्ग में वे कृषक थे जिन्हें भूमि को जोतने का अधिकार राजा अथवा सामन्तों से मिलता था । यद्यपि वह अधिकार वंशागत होता था किन्तु कृषक को भूमि पर स्वामित्व के अधिकार नहीं दिये जाते थे । वह अपनी इच्छानुसार भूमि छोड़ कर अन्यत्र नहीं जा सकता था । इसके विपरीत यदि उसका स्वामी उसकी भूमि या भूमि के किसी भाग को दूसरे को बेच देता था तो भी वह उस पर काश्त कर सकता था ।

स्वामी वर्ग को कृषकों पर कई अन्य अधिकार भी प्राप्त थे । वह उनसे पैसे वसूल कर उसके द्वारा चलाई गई चक्की पर गेहूं पिसने के लिए और अपनी भट्टियों पर डबल रोटी सेखने के लिये बाध्य कर सकते थे । कुछ प्रदेशों में सामन्त वर्ग को अपने कृषकों पर न्यायिक अधिकार भी मिले हुए थे । फांस में. इंग्लैण्ड व नार्मडी की अपेक्षा सामन्तों को ऐसे अधिकार अधिक मिले हुए थे ।

यद्यपि स्वामी वर्ग को कृषकों पर अनेक अधिकार मिले हुए थे किन्तु सिडनी पेन्टर के मत में इनकी भी एक सीमा थी । मध्यकालीन युग मे परम्पराओं को काफी हद तक मान्यता मिली हुई थी । क्योंकि उस युग में यह माना जाता था कि अधिकारों के दुरुपयोग का परिणाम अच्छा नहीं होता इसलिये आम तौर पर वे अपने अधिकारों का अतिक्रमण नहीं करते थे ।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि मध्यकालीन युग में कृषकों की दशा शोचनीय थी । उनकी स्थिति रोमन साम्राज्य के दासों से कुछ ही बेहतर थी । खेती के पिछड़े तरीकों को प्रयोग में लाने के कारण उसकी उत्पादन क्षमता कम थी ।

2.3.2 राजा व सामन्तों के पारस्परिक सम्बन्ध:

मध्य युग के आरम्भ में राजा अपने एक सामन्त को उसके जीवन काल के लिये अधिकार देता था । वह इन अधिकारों को कभी भी छीन सकता था । लेकिन दसवीं सदी के अन्त तक यह पद वंशागत हो गया क्योंकि एक सामन्त की मृत्यु पर एक राजा उसके ज्येष्ठ पुत्र को उत्तराधिकार से वंचित करने में स्वंय को असमर्थ पाता था । ऐसी परिस्थिति में दोनों के सम्बन्ध पारस्परिक समझौतो द्वारा तय होने लगे । ऐसे समझौते तत्कालीन परिस्थितियों के अनुसार किये जाने लगे । फलस्वरूप इनमें एकरूपता का अभाव था ।

कभी-कभी अनेक सामन्तों की शक्ति राजा से कहीं अधिक हो जाती थी । वे अवसर मिलते ही राजा को चुनौती दे देते थे । अतएव राजा सामन्तों की शक्ति को बढ़ने से रोकने के लिये प्रयत्न करता रहता था ।

इस युग में अनेक देशों में राजा का चुनाव होता था । आम तौर पर इस पद के लिये दो या अधिक प्रत्याशी होते थे । उनमें से एक का चुनाव होता था । उनका चुनाव होने पर वे असंतुष्ट हो जाते थे तथा गृह युद्ध छेड देते थे । इस प्रकार के संघर्षों हें विभिन्न प्रदेशों के सामन्त अपने हितों के अनुसार लड़ते थे । उप-सामन्त भी समय समय पर अकेले अथवा मिलकर अपने. सामन्त का विरोध करते थे ।

राजा व सामन्तों तथा सामन्तों व उप-सामन्तों के बीच परस्पर संघर्ष की स्थिति का शांति व सुव्यवस्था पर विपरीत प्रभाव पड़ता था ।

इस समय में चर्च भी राजनीतिक मामलों में हस्तक्षेप करती थी । अनेक राजाओं अथवा सामन्तो ने पारस्परिक संघर्ष में चर्च की सहायता ली ।

2.4 मध्यकालान युग मे विभिन्न देशों में सामन्तवाद :

मध्यकालीन युग में पश्चिमी यूरोप के तीन प्रमुख देश थे, 1-, पश्चिमी फ्रांस 2- पूर्वी फांस जिनमें अधिकांश जर्मन प्रदेश थे, 3- इंग्लेण्ड । उत्तरी यूरोप में स्केण्डनेविका के राज्य थे । इनमें से स्वेडन, नार्वे व डेनमार्क प्रमुख थे । नीवोग्राड, कीव व फोसिया (Frocia) के रूसी

प्रदेश स्केण्डनेविया के राज्यों के अधीन थे । इटली भी कई टुकड़ों' में विभाजित था । इनमें से सबसे अधिक शक्तिशाली लोम्बार्ड का शासक था जो स्वंय को राजा कहता था । इस युग तक दक्षिण पश्चिमी इटली व सिसली मुसलमानों के प्रभुत्व से स्वतन्त्र हो गये थे । दक्षिण पूर्वी प्रदेशों पर मुसलमानों का राज्य था । इंग्लैण्ड का अपना पृथक अस्तित्व था ।

फिशर के अनुसार दसवीं सदी के आरम्भ में जर्मनी, इटली और फांस में ऐसा कोई संगठन नहीं था जो एक राज्य के लिये उपयुक्त माना जा सके । ये देश राष्ट्र कहलाने के लिये किसी भी प्रकार से अधिकारी नहीं थे । इन सब प्रदेशों में सामन्तवादी राजतन्त्र प्रचलित था । क्योंकि विभिन्न प्रदेशों में इस प्रकार के राजतंत्र के विकास की परिस्थितियाँ अलग-अलग थी इसलिये इनमें इसका विकास भी भिन्न-भिन्न तरीके सें हुआ ।

2.4.1 पश्चिमी फ्रांस:

उस समय पश्चिमी फ्रांस अनेक राज्यों में विभाजित था । इनमें ओरलियंस (Orleans), पेरिस और ड्रेअक्स (Dreyex) के प्रदेशों पर एक शासक का राज्य था इसी शासक के अधीन अजो (Anjoy), मेन (Mane), टूरेन ब्लो (Tourainne Blone), चार्टस (Chartses) और कुछ अन्य काऊटियों भी थी । फ्लैंडर्स (Flanders) नामंडी, (Normandy) गोंडी (Burgandy), ग्यूरान (Guieene), गेस्कनी (Gascony), खो (Tulon), बारसिलोना (Barcelona) के प्रदेशों में अलग-अलगह शासक थे । ये सब शासक स्वंय को डयूक (Duke) कहते थे तथा एक राजा का चुनाव करते थे जिसमें आर्च-बिशप व बिशप भाग लेते थे । 987 ईस्वी में पेरिस व ओरलियस के डयूक अज कापेट को राजा चुना गया । चर्च ने भी उसके चुनाव का समर्थन किया । हयूज कापेट ने अपने जीवन काल में ही यह सुनिश्चित कर लिया था कि उसके वंशज ही उसके उत्तराधिकारी बनें । हयूज कापेट व उसके उत्तराधिकारियों के समय में सामन्तों की शक्ति को नियंत्रित करने के लिये अनेक असफल प्रयत्न किये । उनकी असफलता का एक प्रमुख कारण यह था कि कुछ सामन्तों की शक्ति उनसे कहीं अधिक थी । ऐसी परिस्थितियों में. भी राजा की सजा को बने रहने का एक कारण उसको चर्च का समर्थन प्राप्त होना था ।

इसके अतिरिक्त कापेटियन राजा अपने अधीन डयूकों व काऊंटों को हानि पहुंचाने में असमर्थ थे । क्योंकि सामन्तवादी प्रथा में एक अधिपति (Overlord) का होना आवश्यक था, इसलिये उन्होंने अपने से कमजोर राजा की सत्ता का अन्त नहीं किया ।

बारहवीं सदी में भी राजाओं ने सामन्तों की शक्ति को कुचलने के प्रयास किये । इन प्रयत्नों में उन्हौंने कई बार चर्च की सहायता भी ली । फिसर के अनुसार लुई. द्याहठम ने इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु मध्यम वर्ग के सदस्यों को उच्च सरकारी पद दिये । यद्यपि आने वाली शताब्दियों में नौकरशाही के ढांचे में समयानुकूल कुछ परिवर्तन किये गये किन्तु उसके ढाँचे का स्वरूप नहीं बदला । फिलीप द्वितीय (1179-1223) नार्मडी, मेन, अजो, वरमो (Vermon), डोइस (Douis) और टूरेन को जीत कर अन्य डयूकों के मुकाबले में शक्तिशाली हो गया । इससे उसकी आमदनी भी चौगुनी हो गई । इस धन की मदद से वह स्थायी सेना रखने लगा ।

लेकिन फिर भी उसके तथा उसके उत्तराधिकारियों के समय में सामन्त अवसर मिलते ही विद्रोह कर देते थे ।

1300 ईस्वी में फांस के शासक ने अपनी शक्ति बढ़ाने के लिये स्टेट्स जनरल (Strates Genera) नामक संस्था का गठन किया । इस संस्था के तीन सदन थे । पादरी, सामन्तों और साधारण वर्ग के प्रतिनिधि अपने अपने पृथक सदनों में विचार विमर्श करते थे । क्योंकि इसके सदस्य जनता का प्रतिनिधित्व नहीं करते थे इसलिये यह संस्था फ्रांस की राजनीति को सही दिशा दिखाने में निर्णायक भूमिका अदा नहीं कर सकी । यह तो राजा के अधिकारों का ही समर्थन करती रही ।

राजा को समर्थन देने के लिये एक और सभा थी जिसे क्यूरिया (Curia) कहते थे । इस सभा में वह अपने अधीनस्थ सामन्तों के साथ विचार विमर्श करता था । आम तौर पर यह सभा एक वर्ष में दो बार क्रिसमस और ईस्टर पर बुलाई जाती थी लेकिन जरूरत पड़ने पर राजा कभी भी इसको बुला सकता था । सरकारी अधिकारियों की स्थायी कमेटियाँ इसके लिये कार्यक्रम तैयार करती थीं । आरम्भ में तो इस सभा के अधिवेशनों में ऐसे काऊंट व पादरी ही भाग लेते थे जो राजा के समर्थक होते थे लेकिन बाद में इसमें बड़े सामन्त भी भाग लेने लगे क्योंकि राजा की शक्ति बढ़ गई थी ।

चौदहवीं शताब्दी के प्रारम्भ तक फ्रांस के विभिन्न प्रदेशों में समान कानून लागू नहीं थे । लुई नौवें (126-1270) ने इस दिशा में पहला कदम उठाया । उसने पार्लियामेन्ट ऑफ पेरिस (Parilament of Paris) को एक न्यायिक निगम का स्तर प्रदान किया । इसके सदस्य कानून के मर्मज्ञ होते थे । क्योंकि वे रोमन साम्राज्य के कानून से प्रभावित थे इसलिये वे राजा के विशेषाधिकारों का समर्थन करते थे । कुछ समय बाद इस निगम की सदस्यता धन के बल पर अथवा राजा द्वारा मनोनीत किये जाने पर प्राप्त की जाने लगी ।

तेरहवीं सदी में स्टेट्स जनरल, क्यूरिया और पार्लियामेन्ट ऑफ पेरिस के माध्यम से फ्रांस में राजा की शक्ति व अधिकारों में वृद्धि हुई। इस शताब्दी में फ्रांस के शासकों ने वित्तीय प्रबन्ध का केन्द्रीयकरण करके भी अपनी शक्ति बढ़ाई । उन्होंने प्रत्यक्ष कर लगा कर अपनी आमदनी और बढ़ाई । नौकरशाही ने भी उनका समर्थन किया क्योंकि उनकी नियुक्ति तथा वेतन की अदायगी राजा के हाथ में थी । राजाओं ने अपने कुछ विशेष सलाहकार भी नियुक्त किये । इनमें वह अपने हितों ' के बारे में विचार विमर्श करता था । राजाओं ने सामन्तों, काऊंटों, व विशपों के अतिरिक्त प्रजा के अन्य वर्गों से भी सम्पर्क स्थापित किया । इस समय तक पश्चिमी यूरोप के नगर अपने शासक को वित्तीय व सैनिक सहायता प्रदान करने में सक्षम हो गये थे, इसलिये राजाओं ने उनके साथ निकट के सम्बन्ध स्थापित किये ।

पन्द्रहवी व सोलहवीं शताब्दी में फ्रांस के शासकों ने अपनी आमदनी बढ़ाने के लिये जनता पर अनेक कर लगायो । 1343 ई० में नमक कर (Gabelle) वसूल किया गया । कुछ समय बाद टेली (Taille) नामक कर लगाया गया । सरकारी मुद्राओं में शुद्ध धातु की मात्रा को बार बार कम किया गया । इन करों की वसूली से भी राजा अपने खर्चे पूरे नहीं कर सकता था क्योंकि इस समय फ्रांस लगातार युद्ध में उलझा रहता था । इससे मध्यम वर्ग तथा किसानों में असंतोष बढ़ता गया । 1358 ई० में कृषकों के एक भयंकर विद्रोह को दबा दिया गया ।

चौदहवीं सदी के अन्त तक राजा की शक्ति में इतनी वृद्धि हो गई थी कि वह निरंकुशता की ओर बढ़ने लगा । उनके पास एक स्थायी सेना थी । वह जब चाहे कोई भी कर लगा सकता था । यद्‌यपि नौकरशाही राजा के अधिकरों को सीमित करना चाहती थी । किन्तु उस समय उसे राजा के आदेशों पर चलना पड़ता था । केवल दो महत्वपूर्ण सामंती परिवारो-ओर्लियस व बोर्बो-का अस्तित्व बना हुआ था, लेकिन इन दोनों परिवारों के राजा के साथ वैवाहिक सम्बन्ध थे । शेष सामन्तों की आपस में बनती नहीं थी ।

एक ऐसे युग में जब कि इंग्लैण्ड राष्ट्रीय राज्य बनने की दिशा में अग्रसर हो रहा था फ्रांस निरंकुशता की ओर कदम बढ़ा रहा था ।

2.4.2 पूर्वी फ्रेंकिश राज्य (जर्मनी के प्रदेश):

इसमें लोरेन (Lorrane), फ्रांस फ्रेंकोनिया (Franconia), सेक्सनी (Saxony), बवेरिया (Bavaria) व स्वाबिया (Swabia) के प्रदेश शामिल थे । आरम्भ में पश्चिमी फ्रेंकोनिया तथा लारेन के अतिरिक्त अन्य प्रदेशों में सामन्तवाद का प्रचलन नहीं था । यहाँ के काऊंट केवल अपने अधिपति के एजेंट होते थे । कृषक सामन्तों के चंगुल से मुक्त थे । नौवीं सदी के अन्त में वाईकिंगो (Vikings) और मग्यारों के आक्रमणों के कारण पूर्वी फ्रेंकिश राज्य के केरोलिज्जियन (Caroliggain) वंश की सत्ता कमजोर हो गई । इसके फलस्वरूप फ्रेंकोनिया, स्वाबिया और बवेरिया आदि प्रदेशों में स्थानीय नेताओं ने अपना प्रभुत्व स्थापित कर "डयूक" की उपाधि धारण कर ली । उन्होंने काऊंटों को अपने अधीन किया तथा गिरजाघरों पर संरक्षण करने का अधिकार प्राप्त कर लिया । पूर्वी फ्रांस के समान पश्चिम फ्रेंकिश राज्य में एक ही परिवास के सदस्यों को राजा के पद के लिये चुनाव में भाग लेने का अधिकार नहीं था । अतएव प्रत्येक राजा की मृत्यु पर किसी भी डयूक अथवा उसके परिवार के सदस्य को चुनकर राजा बनाया जा सकता था । इसके फलस्वरूप विभिन्न डयूकों में प्रतिस्पर्धा बढ़ती गई और चुनाव से असंतुष्ट डयूकों ने चुने हुए राजा का विरोध किया । दसवीं सदी के पूर्वार्द्ध में हेनरी व उसके पुत्र ओटो ने मग्यारों के आक्रमणों को असफल कर दिया । ओटो प्रथम (936-73) ने अपनी शक्ति बढ़ाई । उसने डयूकों के विरूद्ध स्थानीय व्यक्तियों का सहयोग लिया तथा चर्च पर भी नियन्त्रण स्थापित किया । लोम्बार्ड (Lombard) को जीत कर वह 962 ई० में रोम गया जहां उसे पवित्र रोमन सम्राट (Holy Roman Emperor) घोषित किया गया ।

यघपि ग्यारहवीं सदी के आरम्भ तक जर्मन प्रदेशों में भी सामन्तवाद प्रचलित हो गया था लेकिन कुछ स्थानीय लार्ड्स (Lords) राजा अथवा सामन्त से मिली हुई भूमि के अतिरिक्त अन्य साधनों से भी भूमि पर अधिकार कर लेता था ।

बारहवीं सदी के आरम्भ मैं स्वाविया के डयूक ने फ्रेंकोनिया के डयूक को राजा चुने जाने पर गृह युद्ध छेड़ दिया जो काफी लम्बे समय तक चला । इसका लाभ अन्य डयूकों, काऊंटो व लार्डो ने उठाया । समस्त जर्मन प्रदेशों में अराजकता फैलती गई तथा पवित्र रोमन साम्राज्य अत्यन्त दुर्बल हो गया । फेडरिक प्रथम (1152-90) व हेनरी द्‌याहठम (1190-97) ने बैरनों की शक्ति कम करने के स्थान पर इटली के प्रदेशों को जीतने में अपनी समय व शक्ति लगाई । हेनरी द्‌यार्हठम के समय में पवित्र रोमन साम्राज्य में सिसली व रोम को छोड़

कर शेष इटली के प्रदेश उसके अधीन हो गये । ओटो (1209-1212) का झगड़ा पोप से हो गया । पोप की सहायता से सिसली के शासक फेडरिक द्वितीय (1212-50) को सम्राट चुना गया । उसने सामन्तों की सभी मांगें स्वीकार कर ली । उनका पद वंशागत कर दिया गया, सभी प्रकार के न्यायिक तथा नगरों के प्रशासन के अधिकार भी प्रदान किये । उनकी भूमि पर किले निमार्ण न करने और कर न लगाने का भी उसने वचन दिया । फेडरिक के उत्तराधिकारी अपने अधिकारों को पुन: प्राप्त करने में असफल रहे । सिडनी पेन्टर के मत में तेरहवीं शताब्दी के अन्त में जर्मनी एक संगठित राज्य नहीं था अपितु एक चुने हुए राजा की अस्पष्ट सत्ता के अधीन सामन्तों का एक ढीला-ढाला संगठन था । एक राजा के चुनाव के बाद होने वाले संघर्ष को टालने के लिये सम्राट चार्ल्स चतुर्थ ने 1356 ईस्वी में गोल्डन बुल (Goldan Bull) नामक आदेश जारी किया । इसके अनुसार सात सामन्त मेन्त्र, ट्रेवेस (Treves) और कोलों (Colough) के आर्च बिशप, राईन (Rhine) का काऊंट, सेक्सनी (Dscpmu) का डयूक ब्रेंडनबर्ग का मार्ग्रव (Margrave) और बोहमिया (Bohemia) का राजा कानूनी तौर पर सम्राट का चुनाव करने के लिये मतदाता माने गये । इनमें से छ: को यह अधिकार वंशागत तौर पर दिया गया । केवल बोहमिया को यह अधिकार इसलिये नहीं दिया गया क्योंकि वहां के राजा का चुनाव होता था । इस आदेश में यह संकेत भी दिया गया कि ये साता मिल कर जर्मनी के मामलों के लिये ण्क निरीक्षक समिति के रूप मैं कार्य करेंगे । इस आदेश ने सम्राट के चुनाव को विवाद से मुक्त रखने में सहायता दी तथा कुछ जर्मन राज्यों को विघटन होने से रोक दिया । लेकिन इसके बाद भी अनेक जर्मन प्रदेशों का तेजी के साथ विघटन हुआ । चौदहवीं व पन्द्रहवी शताब्दी में पवित्र रोमन साम्राज्य स्वतन्त्र राज्यों का एक जमाव था । जर्मनी में ऐसी छोटी व बड़ी 1600 इकाईयाँ थी । इनमें आस्ट्रिया, बवेरिया, सेक्सनी, ब्रेंडनबर्ग और राईन की पेलेटीन (Paltine) काऊंटी आदि बड़ी इकाईयों के अतिरिक्त छोटे-छोटे सामन्तों (Knights) के अधीन प्रदेश तथा स्तन्त्र नगर भी थे । यदि सम्राट के पास कोई अधिकार थे तो वे जर्मनी के बाहर के प्रदेशों में थे ।

ऐसी परिस्थितियों में पवित्र रोमन साम्राज्य न तो फ्रांस के समान निरंकुश राजतन्त्र की ओर अग्रसर हो रहा था और न ही इंग्लैण्ड के समान प्रजातंत्रिक प्रणाली की दिशा में कदम बढ़ा रहा था । वह तो लगातार विघटन की ओर बढ़ रहा था ।

2.4.3 इंग्लैण्ड:

नौवीं शताब्दी के अन्त तक ऐंग्लो - सेक्सनों का राज्य समस्त इंग्लैण्ड में फैल गया था । सिडनी पेन्ट्रर के मत में इस समय के ऐंग्लो-सेकसन राज्यों की सरकार पश्चिमी यूरोप के किसी अन्य राज्य के मकाबले में कहीं अधिक संगठित थी । यद्यपि सैद्धान्तिक रूप से राजा का चुनाव होता था लेकिन आम तौर पर एल्केड महान के वंशजों में से ही राजा का चुनाव किया जाता था । शारीरिक दृष्टि से योग्य किसी भी व्यक्ति को राजा सैनिक सेवा के लिये बुला सकता था । स्थानीय अदालतों द्वारा अपराधियों से वसूल किये गये जुर्माने का दो-तिहाई और गंभीर किस्म के अपराधों के दोषी व्यक्तियों से वसूल किया गया सारा जुर्माना उसको मिलता था । प्रत्येक काऊटी अथवा शायर (Shere) में वह अपने प्रतिनिधि नियुक्त करता था जो

उसके आदेशों का पालन करते थे । वह बिशप तथा एबोट (Abbot) की नियुक्ति भी करता था ।

एंग्लो-सेक्सन राज्य में एक सभा भी थी जिसे विटानगेमोट (Witangemot) कहते थे । इसके सदस्य राज्य के प्रभावशाली व्यक्ति, अधिकारी, भूमिपति व पादरी होते थे । यह सभा ही राजा के चुनाव की प्रक्रिया को सम्पन्न करती थी । राजा से यह आशा की जाती थी कि वह नये कानून बनाने तथा अन्य महत्वपूर्ण मामलों पर उसकी राय ले । राजा व विटानगेमोट महत्वपूर्ण स्थानीय अधिकारियों (earldorman) का चुनाव करते थे । न्याय का प्रबन्ध स्थानीय अदालतें करती थीं जिनके अपने अपने नियम थे । दसवीं सदी तक राजा ने कुछ अपराधों का दण्ड देने की जिम्मेवारी अपने उपर ले ली थी ।

नार्मन ऐंजिवन (Norman-Angivan) काल (1066-1153) : संसदीय संस्थाओं का बीजारोपण-

इंगलैण्ड में राजनैतिक संगठन का स्वरूप ग्यारहवीं शताब्दी में नार्मन विजय के बाद अधिक स्पष्ट हो जाता है । 1066 ई0 में नोर्मडी के ड्यूक विलियम प्रथम ने इग्लैण्ड पर आक्रमण कर वही के शासक हेराल्ड को मार दिया और राज गद्दी हथिया ली । विजेता विलियम प्रथम ने ऐसी प्रशासनिक संस्थाओं का विकास किया जो स्वशासित होते हुए भी राजा के नियंत्रण में थी । विलियम के आक्रमण से पूर्व इंग्लैण्ड में स्वशासित नगर थे जिन्हें "बरो" (Burrows) कहा जाता था । इनकी अपनी निर्वाचित नगर सभा होती थी जो नगर का प्रशासन करती थी और एक सीमा तक सुरक्षा और न्याय व्यवस्था भी देखती थी । विलियम ने इन परिषदों को समाप्त नहीं किया बल्कि दो और संस्थाओं की स्थापना की

1- मैगनम कन्सीलियम (Magnum Concilium) अथवा वृहद् सभा
2- क्यूरिया रेजिस (Curea Regis) या शाही परिषद्

दोनों संस्थाएं नार्मन - ऐंजिवन काल की सर्वाधिक महत्वपूर्ण देन है । मैगनम कन्सिलियम में नीति निर्धारण और आर्थिक विषयों पर चर्चा होती थी । क्यूरिया रेजिस का कार्य सम्भवत: उच्चतम न्यायालय के रूप मे काम करना तथा राजा को दिन प्रतिदिन के प्रशासन में सहायता देना था । इन दोनों संस्थाओं से आगे चलकर क्रमश: संसद और प्रिवी कौंसिल (Privy Council) का विकास हुआ ।

ट्यूडर काल के पूर्व संसद का स्वरूप: मैग्नाकार्टा: पार्लियामेन्ट

विलियम के प्रपौत्र हेनरी द्वितीय (1154-89) को इंगलैण्ड के इतिहास में महान् विधिवेत्ता कहा जाता है । उसके समय में क्यरिया रेजिस के लिए प्रशासन और न्याय सम्बन्धित दोनों कार्य को साथ-साथ करना कठिन हो गया । इसलिए इसके दो भाग किये गये- राज परिषद, जो आगे चलकर "प्रिवी-कौन्सिल" कहलायी, प्रशासन सम्बन्धी कार्यों के लिए, और "एक्सचेकर" (Exchequer) वितीय मामलों के लिए । हेनरी द्वितीय के समय वृहद् सभा के अधिवेशन नियमित रूप से होने लगे । इसमें छोटे-छोटे सामन्तों और कृतियों को भी शामिल कर लिया गया । इसका यह अर्थ नहीं है कि अधिक लोगों को शामिल करने से शासक के मन में जनतांत्रिक भावना का उदय हो रहा था बल्कि इसका उद्देश्य अत्यधिक धन बटोरना था । वह

सभी कृतियों पर कर लगाना चाहता था । इसलिए अधिकाधिक लोगों को वृहद् सभा में बुलाना लाभदायक था ।

इंग्लैण्ड के इतिहास में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना राजा जीन (1199- 1216) के समय हुई । वह एक अत्याचारी शासक था । अपने क्रूर कार्यों तथा दुष्टतापूर्ण व्यवहार के कारण वह अपने समर्थकों का विश्वास खो बैठा । जनता ने राजा का विरोध करना प्रारम्भ किया । शासन सुधारों का मांग पत्र तैयार करने हेतु स्टीफन लोग्टन (Stephen Loughton) के नेतृत्व में 1213 ई0 में सेन्ट अत्वास (Saint Alvas) में एक सभा हुई । इस सभा ने नागरिक स्वतन्त्रता का अधिकार पत्र तैयार किया । इसे 'मैग्ना कार्टा' (Magna charta) अथवा "दि ग्रेट चार्टर" (महाधिकार पत्र) के नाम से पुकारा गया । यह महाधिकार पत्र राजा जॉन के समक्ष स्वीकृति हेतु प्रस्तुत किया गया । अमीरों और जनता द्वारा अत्यधिक दबाव डालने पर राजा जॉन ने विवश होकर जून 15, 1215 ई. को इसे स्वीकार कर लिया । इस महाधिकार पत्र द्वारा, जिसमें कुल 63 धाराएं थी, राजा पर अंकुश लगाया गया । इसने यह सिद्ध कर दिया कि सम्राट के अधिकरों के साथ-साथ जनता के भी कुछ अधिकार होते हैं । इसकी स्वीकृति से इस सिद्धान्त को मान्यता मिली कि बिना शासितों की अनुमति के शासक को कर लगाने का अधिकार नहीं है । यह सिद्धान्त आज भी इंग्लैण्ड की संसदीय व्यवस्था का मूलभूत तत्व है । यद्यपि उस समय अपनी सम्मति देने का अधिकार केवल सामन्तों और अतियों को ही प्राप्त था परन्तु आगे के युग में यह जनता का मौलिक अधिकार बन गया । इसलिए बहुत से इतिहासकार इस अधिकार पत्र की घटना को इंग्लैण्ड में जनतन्त्र का प्रारम्भ मानते है । थॉम्पसन और जानसन ने उसके महत्व पर प्रकाश डालते हुए लिखा कि "मैग्नाकार्टा" वस्तुत: ब्रिटिश संविधान का आधार स्तम्भ है क्योंकि इसने यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया कि राज भी विधि के उपर नहीं अपितु विधि के अधीन है । "

जोन की मृत्यु के बाद हेनरी तृतीय (1216- 1272) गद्दी पर बैठा । वह बड़ा अपव्ययी था । हैनरी तृतीय ने "वृहद्-सभा" की अनुमति के बिना कर लगाने का प्रयत्न किया । इसके विरोध में जनता ने अर्ल साइमन (Elarl Simon) के नेतृत्व में खुली बगावत कर दी । हेनरी को बन्दी बना लिया गया तथा अर्ल साइमन सम्राट बना । क्योंकि धन की कमी पूर्ति के लिए कर लगाना अत्यावश्यक था और इसकी अनुमति उसे वृहद् सभी ही दे सकती थी । अत: 1265 में वृहद् सभा का अधिवेशन बुलाया गया । किन्तु साइमन को अपनी उदारनीति कार्यान्वित करने में सफलता नहीं मिली और पुन: संघर्ष प्रारम्भ हो गया । इस संघर्ष में साइमन मारा गया और हेनरी तृतीय पुन: गद्दी पर बैठा । पार्लियामेन्ट के इतिहास में साइमन का नाम विशेष आदर से लिया जाता है। सबसे पहले उसने जनता के प्रतिनिधित्व का सिद्धान्त स्वीकार किया और उसे कार्य रूप में लाया ।

हेनरी तृतीय की मृत्यु के बाद उसका पुत्र एडवर्ड प्रथम (1272-1307) गद्दी पर बैठा । यह उदार शासक था । अत: उसने साइमन की नीति का अनुकरण किया । इसके शासन काल में पार्लियामेन्ट दो भागों में बंट गयी, क्योंकि बेरन्स और पादरियों ने अपने आपको अन्य प्रतिनिधियों से अलग कर लिया । इस प्रकार अलग हुआ सदन जो आगे चल कर "हाउस ऑफ

लार्डस" (House of Lords) कहलाया, और काउन्टी (जिला) तथा नगर प्रतिनिधियों का शेष सदन "हाउस ऑफ कामन्स" (House of Commons) हो गया । इसे इतिहास में "मॉडल पार्लियामेन्ट" (Model Parliament) कहते हैं । ब्रिटिश राजनीतिज्ञों का विचार हैं कि मॉडल पार्लियामेन्ट का दो सदनों में बंटना सांविधानिक इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना है क्योंकि इसके पश्चात् ब्रिटेन से प्रभावित होकर सभी लोकतन्त्रीय देशों ने अपने यहाँ द्विसदनात्मक व्यवस्था को अपनाया । 1297 ई0 में एक आज्ञा द्वारा यह व्यवस्था की गई कि सम्राट संसद की पूर्व स्वीकृति के बिना कोई धन खर्च नहीं कर सकता ।

लंकास्ट्रियन (Lancastrian) युग (1399-1461) पार्लियामेन्ट के उत्कर्ष का काल है । यद्यपि यह करीब 62 वर्षों का छोटा युग है फिर भी यह इंग्लैण्ड के वैधानिक इतिहास में बड़ा ही महत्वपूर्ण है । इस युग में तीन राजाओं-चौथा, पांचवा और छठा हेनरी-ने राज्य किया । किन्तु ये सभी शासक पार्लियामेन्ट के हाथ में कठपुतली- जैसे थे और वे पार्लियामेन्ट के प्रति उत्तरदायी बन गये थे । अत: लंकास्टर युग के शासन को वैधानिक या पार्लियामेन्टरी शासन कहते है ।

लंकास्ट्रियन युग में सांविधानिक दृष्टि से यह महत्वपूर्ण परिवर्तन हुआ कि हेनरी चतुर्थ ने "क्यूरिया रेजिस" में अपने कुछ परामर्शदाता चुनकर इन परामर्शदाताओं की संस्था को "प्रिवी कौंसिल" (Privy Council) का नाम दिया । इस प्रकार प्रिवी कौन्सिल का जन्म हुआ । पन्द्रहवीं शताब्दी के अन्त तक "कामन्स सभा" पर्याप्त शक्तिशाली हो गयी । जैसे जैसे नगर समृद्ध होते गये "कामन्स सभा" की शक्ति बढ़ती गयी । राजा चूंकि धन प्राप्ति के लिए नगरों के उत्पादन, कृषि और निर्यात की आय पर कर लगाता था, इसलिए वित्तीय विषयों में इस सभा से परामर्श अधिक आवश्यक होता गया । इसके अतिरिक्त कानून बनाने में भी कामन्स सभा का महत्व बढ़ा । लगभग पूरी पन्द्रहवीं शताब्दी में सामन्तों के युद्ध होते रहे । अत: सामन्त अधिवेशनों में उपस्थित नहीं हो पाये थे । फलस्वरूप राजा कामन्स सभा पर निर्भर होता गया । बड़ी संख्या में सामन्तों के युद्धों में मारे जाने से लार्डस सभा भी उतनी प्रभावी नहीं रही जितनी पहले थी । इसलिए अब दोनों सभाओं की मर्यादा लगभग समान हो गयी । फिर भी "कामन्स-सभा" का वित्तीय मामलों में और लार्डस सभा का न्यायिक विषयों में विशेष महत्व था । निष्कर्षत: इतना कहा जा सकता है कि इस युग में इंग्लैण्ड में संसदीय संस्थाओं का प्रादुर्भाव हो चुका था ।

यार्क (York) वंश (1461-85) के शासन काल में पार्लियामेन्ट की शक्ति घटने लगी और उसकी उपेक्षा की जाने लगी । पार्लियामेन्ट की बिना मन्तूरी के कर वसूल किये जाने लगे । शासक अपने मंत्रियों को पार्लियामेन्ट के प्रति जिम्मेदार होने से भी रोकने लगे । इस तरह यार्क वंशीय राजा पार्लियामेन्ट के अधिकारा पर चोट करने लगे ।

टयूड़र (Tudor) काल: परम्पराओं से हटकर संसद की प्रतिष्ठा में वृद्धि

टयूडर काल (1485-1603) के शासक निरंकुश थे । यद्यपि इस युग के निरंकुश शक्तिशाली शासकों जैसे हेनरी सप्तम्, हेनरी अष्टम् तथा एलिजाबेथ प्रथम ने बहुत सी परम्पराओं को तोड़कर मनमाने कार्य किये परन्तु उनके परिणाम संसदीय विकास के लिए

हितकर सिद्ध हुए । निरंकुश ट्यूडर शासन में संसद की शक्ति बढ़ने का सबसे बड़ा कारण ट्यूडर शासकों की सक्रियता और परम्परा से हट कर शासन करना था ।

उदाहरण के लिए हेनरी सप्तम के समय परम्परा को तोड़ कर एंग्लिकन (Anglican) चर्च की स्थापना हुई । धर्म के क्षेत्र में बह बड़ी बात थी । पोप के साथ सम्बन्ध तोड़ना और नये धर्म की स्थापना करना बड़े साहस का कार्य था । इससे क्षुब्ध होकर यूरोपीय देश इंग्लैण्ड पर आक्रमण कर सकते थे । ऐसी परिस्थिति में राजा के लिए संसद का सहयोग पाना अनिवार्य था और उसके उस विचार से संसद की प्रतिष्ठा बढ़ी । इसी प्रकार महारानी एलिजाबेथ ने भी संसद में ऐसे कार्य कराये जो संसद के क्षेत्र में नहीं थे । उदाहरणार्थ--इस समय सामन्त अपनी भूमि से कृषकों को हटा कर भेड़ पालना चाहते थे क्योंकि इस धन्धे से अधिक लाभ था । एलिजाबेथ ने पृथक-पृथक प्रदेश के सामन्तों को यह अधिकार देने के लिए संसद से "एकलोजर ऐकट" (Enclosure Act) पारित कराये । इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि ट्यूडर शासकों ने संसद का प्रयोग अपनी नीतियों के समर्थन के लिए नये कार्य क्षेत्रों में भी किया । इस प्रकार ट्यूडर शासकों ने अपने हित साधन के लिए अनजाने में ही संसद को शक्तिशाली बना दिया ।

3.4.4 स्केन्डनेविया: नवीं व दसवीं शताब्दी तक स्केन्डनेविया के प्रदेशों में संगठित राजनीतिक व्यवस्था का सूत्रपात नहीं हुआ था । यहाँ के विभिन्न प्रदेशों के स्वामी आपस में लड़ते रहते थे । दसवीं शताब्दी के उत्तरार्ध और ग्यारहवीं शताब्दी के पूर्वाद्ध में इन प्रदेशों में तीन राज्यों-नार्वे, स्वेडन और डेनमार्क-का उदय हुआ । बारहवीं सदी के अन्त में डेनमार्क के राजा ने सैन्य सेवा के बदल में बहादुर व्यक्तियों को भूमि का अनुदान देने की प्रथा को अपनाया । यद्यपि इन प्रदेशों के सामन्त को भूमि पर अधिकार दिये गये थे किन्तु वे न्याय नहीं कर सकते थे । इन तीनों देशों के सामन्तों ने अपनी अपनी परिषदें बनाई तथा उन्होंने राजा की शक्ति को कम करने का प्रयत्न किया । 1282 ईस्वी में डेनमार्क के राजा ने सामन्तों की परिषद का अधिवेशन प्रत्येक साल बुलाने का वचन दिया । चौदहवीं सदी तक इन तीनों राज्यों में सामन्तों की शक्ति इतनी बढ़ गई थी कि वही के राजा उनकी सहमति के बिना कुछ नहीं कर सकते थे।

इन तीनों देशों में सामन्तवाद का स्वरूप फांस से कुछ भिन्न था । सिडनी पेन्टर के मत में यद्यपि उन्हें राजा को सैन्य सेवा प्रदान करनी पड़ती थी और उन्होने बैरन (Baron), नाईट और स्कायर (Squire) की उपाधियों धारण की थी किन्तु मूल रूप से इन प्रदेशों की व्यवस्था गैर सामन्तवादी थी । राजा से मिली हुई भूमि पर वे शासन करने के अधिकारी नहीं यदि उन्हें सरकारी अधिकारी न बनाया गया हो ।

तेरहवीं शताब्दी से नार्वे का विशाल साम्राज्य छिन्न भिन्न होने लगा । स्वेडन व डेनमार्क भी दुर्बल हो गये । चौदहवीं शताब्दी के अन्त में तीनों राज्य डेनमार्क के राजा के अधीन हो गये । स्वेडन ने उसके शासन का निरन्तर विरोध किया । 1523 ईस्वी में स्वेडन स्वतन्त्र हो गया । लेकिन इस समय तक वही के कुछ भागों में केन्टनों (Cantons) का राज्य था ।

इस प्रकार मध्यकालीन युग में स्केन्डनेवियन प्रदेशों में न तो शासक अपनी सत्ता को सुदृढ़ कर सके और न ही वही पर सामन्त अपनी शक्ति में वृद्धि कर सके । इन प्रदेशों में राष्ट्रीय राज्यों का उदय सोलहवीं शताब्दी के उत्तरार्ध में आरम्भ हुआ ।

2.4.5 स्पेन:

मध्यकालीन युग के आरम्भ तक स्पेन के अधिकांश भागों पर मुसलमानों का कब्जा था । 1212 ईस्वी में स्पेन के प्रदेशों की संयुक्त सेना ने मुसलमानों को हराया । 1252 ईस्वी तक ग्रेनेडा (grenada) को छोड़ कर शेष स्पेन में मुस्लिम साम्राज्य का अन्त हो गया । स्पेन के विभिन्न प्रदेशों में सामन्तवाद का रूप अलग-अलग था । बारसीलोना (Barcelona) की काऊंटी ने दक्षिणी फांस की राजनीति में स्वयं को उलझा रखा था । अतएव वही पर सामन्तवाद का स्वरूप फ्रांस के समान था । अरागान (Aragon) में सभी सामन्त व उपसामन्त प्रत्यक्ष रूप से शासक से सम्बद्ध थे । केस्टील (Castelle) लियो ;Leon) व पुर्तगाल में सामन्तवादी प्रथा प्रचलित नहीं थी ।

बारहवीं सदी में अनेक नगरों ने अपने शासकों से चार्टर जारी कराके अधिकार प्राप्त किया । नगरों के प्रतिनिधियों ने सामन्तों की कौंसिल से मिल कर एक सभा (Cortes) का गठन किया । शीघ्र ही नगरों की सभाओं ने कानून बनाने और कर लगाने के विस्तृत अधिकार प्राप्त कर लिये ।

1469 ई0 में अरागान और कास्तील वे राज्यों का एकीकरण हुआ । दोनों संयुक्त सेनाओं ने मुसलमानों को ग्रेनेडा से खदेड दिया । इसी के साथ स्पेन में एकता स्थापित हो गई । सोलहवीं शताब्दी में स्पेन अपने गौरव की पराकाष्ठा पर पहुंच गया । उसके अधिकांश प्रदेशों पर राजा का प्रभुत्व था । कुछ नगरों में कम्यून (Commune) शासन करते थे ।

2.4.6 इटली

नौवीं सदी के अन्त में इटली कई भागों में विभक्त था । रोम में पोप का राज्य था । लोम्बार्ड में राजतन्त्र था तथा कुछ स्वतन्त्र नगर राज्य थे । जर्मनी के राजाओं ने इटली में अपना प्रभाव स्थापित किया । पवित्र रोमन सम्राट हेनरी ह्राहृटम के समय में सिसली व रोम को छोड़ कर शेष इटली उसके अधीन थे । लेकिन लोम्बार्ड व अन्य प्रदेश लगातार जर्मन सम्राटों का विरोध करते रहे । धर्म युद्धों (Crusades) के समय में इटली के अनेक बन्दरगाहों का व्यापार बढ़ा । इन नगरों में कम्यूनों की स्थापना हुई । इन्होंने अपने शासकों, बिशपों व सामन्तों का विरोध किया । उत्तरी इटली में पवित्र रोमन साम्राज्य के आधिपत्य को समाप्त करने के लिये भी संघर्ष हुआ । अन्त में अनेक नगर स्वतन्त्र हो गये तथा उत्तर में छोटे-छोटे राज्य स्थापित हुए । इस प्रकार मध्यकालीन युग में इटली में न तो पूर्ण एकता स्थापित हो सकी और न ही वहां पर व सामन्तवादी राजतंत्र सुदृढ़ हो सका ।

2.4.7 रूस

नौवी सदी में स्वेडन के वाईकिंगों ने रूस के प्रदेशों पर आक्रमण किये । कुछ ही समय में उन्होंने नोवोग्राड (Novograd), कीव (Kiev), फ्रेसिया पर अधिकार कर लिया । रूस के दक्षिणी प्रदेशों पर मुस्लिमों का अधिकार बना रहा ।

अपने अधीन प्रदेशों का शासन स्थानीय रूसी मुखिया करते थे जो स्वंय को प्रिन्स कहते थे । इनमें आपस में संघर्ष होता रहता था । 1380 ईस्वी में रूस के अनेक प्रिंसों ने

मिल कर मंगोलों को हराया । इनका नेता मास्को का प्रिंस था । धीरे-धीरे उसने अनेक प्रदेशों को जीत लिया । 1472 ईस्वी में उसने जार (Czar) की उपाधि धारण की । इस समय में रूस का सम्पर्क यूरोप के साथ स्थापित हुआ । अतएव मध्य युग में रूस यूरोपीय राजनीति से पृथक रहा ।

2.5 सामन्तवाद के पराभाव के कारण:

सामन्तवाद का उदय मध्य युग के आरम्भ में हुआ । इसका पतन भी इसी युग के अन्त में शुरू हुआ । यह पतन प्रशासन की एक विधा के रूप में ही हुआ । सामाजिक क्षेत्र में यह प्रथा एक लम्बे समय तक बनी रही । इसके पतन के निम्नांकित कारण हैं:

(1) असमानता पर आधारित:

यह प्रथा असमानता पर आधारित थी । मार्क ब्लाच के अनुसार इसमें एक योद्धा वर्ग ने किसानों पर अपना आधिपत्य स्थापित किया तथा उनका शोषण किया ।

(2) सत्ता का विभाजन:

इस प्रणाली में सत्ता का विभाजन किया जाता था । राजा व उसके सामन्तों में निरस्तर सत्ता के लिये संघर्ष होता रहता था जिससे अराजकता फैलती थी ।

इनके अतिरिक्त तेरहवीं सदी से पश्चिमी यूरोप व कुछ अन्य देशों में ऐसी नवीन परिस्थितियाँ पैदा हुई जिन्होंने इसके पतन में अपना सहयोग दिया ।

(3) नये हथियारों एवं बारूद का चलन:

नये शस्त्रास्त्रों के प्रचलन, सामरिक पद्धति में परिवर्तन और विशेषत: बन्दूक एवं बारूद के बढ़ते प्रयोग के कारण भी सामन्तवाद का शीघ्रता से पतन हुआ । अभी तक सामन्ती किलों पर तीरों की मार का कोई प्रभाव नहीं पड़ता था । परन्तु, अब बन्दूकों एवं तोपों की मार से किलों की दीवारें सामन्तों की रक्षा करने में असमर्थ थीं । राजा अब बारूद एवं गोलाबारी द्वारा सामन्तों के किलों पर आसानी से कब्जा कर लेते थे ।

(4) कृषि उत्पादन में वृद्धि:

कृषि क्षेत्र में तकनीक में परिवर्तन से कृषि उत्पादकता में वृद्धि हुई । कृषि क्षेत्र में दो खेत प्रणाली के स्थान पर तीन खेत प्रणाली का प्रादुर्भाव हुआ । यद्यपि यूरोप में आठवीं शताब्दी में भी इस प्रकार की प्रणाली के पाए जाने के प्रमाण मिलते हैं किन्तु इस प्रणाली के प्रयोग का विस्तार ग्यारहवीं शताब्दी के आस-पास देखने को मिलता है । तीन खेत प्रणाली के अन्तर्गत कृषि योग्य भूमि को तीन बराबर टुकड़ों में बांट दिया जाता था । राई या गेहूं सर्दी में पहले खेत में उगाया जाता था तथा मटर, ओट्स (Oats) आदि बसन्त ऋतु में दूसरे खेत में तथा तीसरा खेत खाली छोड़ दिया जाता था । इस प्रणाली में जो खेत पहले वर्ष खाली छोड़ दिया जाता था । उस पर अगले वर्ष खेती की जाती थी तथा दूसरे को खाली छोड़ दिया जाता था । इस तीन खेत प्रणाली के विस्तार से कृषि उत्पादन में आश्चर्यजनक वृद्धि हुई । अत: अधिक लोगों का भरण पोषण सम्भव हुआ । परिणामस्वरूप 1000 ई0 तथा 1300 ई0 के मध्य यूरोप की जनसंख्या दुगनी हो गई । शहरों का विकास और जनसंख्या के घनत्व में वृद्धि हुई । शहरों

के विकास से निर्मित वस्तुओं के उत्पादन में तथा आर्थिक विशिष्टीकरण में वृद्धि हुई। अब कृषक की सामन्त पर निर्भरता कम हो गयी जिससे सामन्तवादी प्रणाली का पतन शुरू हुआ।

(5) धर्म युद्धों का प्रभाव:

सामन्तवाद के पतन के लिए धर्मयुद्ध (1095-1291) भी जिम्मेदार थे । धर्मयुद्धों में भाग लेने वाले बहुत से सामन्तों ने या तो अपनी जमीन बेच दी थी या उसे गिरवी रख दिया था । इस तरह सामन्ती शक्ति तथा प्रभाव राजाओं अथवा व्यापारियों के हाथ में चले गये । अनेक सामन्त इन युद्धों में मारे गये और उनकी भूमि राजाओं द्वारा जब्त कर ली गई ।

(6) व्यापारिक वर्ग का अभ्युदय

धर्म युद्धों के परिणामस्वरूप यूरोप के वाणिज्य व्यापार में वृद्धि हुई। धर्म युद्धों के समय यूरोप के लोगों को नये नये देशों का ज्ञान हुआ और वे अन्य देशों से परिचित हुए। पूर्व की भोग विलास वस्तुओं की मांग यूरोप में होने लगी। फलत: व्यापारिक वर्ग का उदय हुआ। व्यापारियों ने खूब धन कमाया । कितने ही व्यापारी सामन्तों से अधिक सम्पन्न थे । इस प्रकार इस वर्ग के पास धन या बुद्धि थी, परन्तु समाज तथा प्रशासन में महत्व नहीं था । सामन्तों की तुलना में इनको निम्न कोटि का समझा जाता था । अत: वे सामन्तों से ईर्ष्या करने लगे और उनके दमन के लिए राजाओं को आर्थिक सहयोग देने लगे ।

व्यापार के विकास में 1200 ई0 से 1400 ई0 के मध्य यूरोप में प्रतिवर्ष आयोजित होने वाले व्यापारिक मेलों ने भी उल्लेखनीय योगदान दिया। ये मेले यूरोप के महत्वपूर्ण शहरों में आयोजित होते थे तथा कई सप्ताह तक चलते थे। उत्तरी यूरोप के व्यापारी अपनी वस्तुएं अनाज, मछली, ऊन, कपड़ा, लकड़ी, लोहा, नमक आदि का विनिमय दक्षिणी यूरोप के व्यापारियों की वस्तुओं मसाले, सिल्क शराब, फल, सोना, चांदी आदि से करते थे । पन्द्रहवीं शताब्दी में इन मेलों का स्थान व्यापारिक शहरों ने ले लिया, जहाँ वर्ष भर व्यापार चलता था । व्यापार के विकास ने निर्मित वस्तुओं की अधिक मांग को जन्म दिया । सोलहवीं शताब्दी में हस्तकला उद्योग, जिनमें शिल्पकार अपने औजारों तथा कच्चे माल से एक स्वतन्त्र लघु उद्योग द्वारा उत्पादन करते थे, का स्थान अपेक्षाकृत बड़े उद्योगों ने ले लिया । धीरे-धीरे पूंजीवादी आर्थिक प्रणाली का जन्म हुआ जिससे सामन्तवादी आर्थिक प्रणाली का पतन हुआ।

व्यापार वाणिज्य तथा उद्योग धन्धों के विकास के परिणामस्वरूप यूरोप में अनेक नये-नये कस्बों तथा नगरों का विकास हुआ। कस्बों और नगरों के व्यवसायियों को सस्ते मजदूरों की आवश्यकता थी । अत: उन्होंने गांवों के किसानों तथा कृषिदासों को प्रलोभन देकर नगरों में आकर बसने के लिए प्रेरित किया । सामन्तों को यह पसन्द नही आया । अत: दोनों वर्गों में संघर्ष शुरू हो गया । राजा भी सामन्तों से छुटकारा चाहते थे । नवोदित वर्ग भी व्यापार के हितों के लिए राजा का समर्थन एवं संरक्षण चाहता था। व्यापारिक वर्ग ने राजाओं को सहयोग देकर सामन्तों की शक्ति को कम करने में उल्लेखनीय भूमिका निभायी ।

(7) राजा की शक्ति में वृद्धि:

स्थायी सेना हो जाने से राजा की शक्ति में वृद्धि हुई। विभिन्न वर्गों के सहयोग ने भी राजा की शक्ति बढ़ाई । मुद्रा के प्रचलन से राजा को अपने अधिकार कायम करने में एक और

सहूलियत प्रदान की । वह प्रत्यक्ष रूप से अपने राज्य में कर लगाने लगा । राजा ने एक स्वतन्त्र नौकरशाही का सृजन करके भी प्रशासनिक क्षेत्र में सामन्तों के प्रभाव से मुक्ति पायी । इन विभिन्न कारकों ने राजा की शक्ति को निरंकुश बनाने एवं सामन्तों को दबाने में भूमिका अदा की।

(8) किसानों का विद्रोह:

सामन्त प्रथा किसानों के शोषण पर आधारित थी । उन पर वे घोर अत्याचार करते थे । सामन्ती उत्पीड़न से क्षुब्ध होकर किसानों ने सामन्त प्रथा का विरोध किया । किसानों के संगठित विद्रोह को दबाना सामन्तों के लिए कठिन हो गया । इन्हीं दिनों एक ऐसी घटना घटी जिससे किसानों के विद्रोह मे व्यापक रूप धारण कर लिया । 1348 ई0 में एक भीषण महामारी ने, जिसे "काली मृत्यु" कहा जाता है, यूरोप की लगभग आधी जनसंख्या का सफाया कर दिया । खेतो में काम करने वाले किसानों एवं मजदूरों की भारी कमी हो गयी । इंग्लैण्ड में कृषिदासों ने उसे अपने काम के लिए उचित पारिश्रमिक जैसे अधिकार की मांग की । किन्तु इंग्लैण्ड की सरकार ने सामन्तों के प्रभाव में आकर किसानों को दबा दिया । 1381 ई0 में वाट टाइलर (Watt Tytle) के नेतृत्व में इंग्लैण्ड के हजारों किसानों ने विद्रोह किया । किसानों के इस विद्रोह में शिल्पियों, कारीगरों तथा निम्न श्रेणियों के पादरियों ने भी भाग लिया । लगभग इसी समय फांसीसी किसानों में एक और भी व्यापक विद्रोह हुआ (जोकरी Jackary) वर्ग का विद्रोह) । इन तथा अन्य किसान विद्रोह को कठोरतापूर्वक दबा दिया गया । परन्तु किसानों का स्वातंत्रय प्रेम नहीं मरा । शहरों के उदय के कारण अब किसानों का सामन्तों पर निर्भर रहना आवश्यक न रह गया, क्योंकि वे शहरों में रोजी-रोटी कमा सकते थे । इस तरह कृषक विद्रोहो ने सामन्तवाद की नीव हिला दी ।

(9) सामन्तों के पारस्परिक संघर्ष -

सामन्तों के पारस्परिक संघर्ष भी सामन्तवाद के पतन का एक बड़ा कारण था । सभी सामन्त अपनी अलग-अलग सेना रखते थे । इन सेनाओं ने एक ओर तो बर्बर आक्रमणकारियों से अपने देश की रक्षा की, दूसरी ओर आपस में लड़कर सामन्ती शक्ति को क्षीण किया । फ्रांस और इंग्लैण्ड में इस तरह के संघर्ष उल्लेखनीय रहे ।

(10) परिवर्तित परिस्थितियाँ-

कई सामन्त, सामन्त तंत्र के शत्रु बन बये ? उनमें से कुछ ने यह देखा कि वेतन के लिए श्रम करने वाले स्वतन्त्र किसान बाध्य होकर काम करने वाले कृषि दासों की अपेक्षा फसल पैदा करते है । बहुत से भूमिपति, जो धन के लिए लालायित थे, इस बात के इक्छुक थे कि उनके कृषि दास या तो धन देकर अपनी स्वतन्त्रता खरीद ले या लगान चाकरी के रूप में न देकर पैसे के रूप में दें । कुछ भूमिपति ऐसे भी थे जो अपनी जागीर के नीरस जीवन के बजाय शहर में या राज दरबार में रहना पसन्द करते थे ।

2.6 राष्ट्रीय राज्यों के उदय के कारण:

सामन्तवाद के पराभाव के समय में पश्चिमी यूरोप में राष्ट्रीय राज्यों का उदय हुआ । मध्य युग के अन्त में व्यापार व वाणिज्य की उन्नति के साथ नगरों का पुन: विकास हुआ ।

इनके निवासियों ने राजा की शक्ति बढ़ाने में रुचि ली । कयोंकि यही के मध्यम वर्ग का हित एक सबल राजतन्त्र से जुड़ा हुआ था । इस समय में चर्च का विरोध भी कम हो गया था । अनेक अवसरों पर चर्च ने सामंतीय अराजकता के विरूद्ध राजतन्त्र का समर्थन किया । धर्म सुधार आन्दोलन ने भी राष्ट्रीयता की भावना को जागृत किया । मठो के टूटने से राजा की आय तथा शक्ति में वृद्धि हुई । धर्म का महत्व कम होने से भाषा, परम्परा और जातीय एकता का महत्व बढ़ा । नवीन भौगेलिक खोजो ने भी प्रत्येक देश के गौरव को बढ़ाकर राष्ट्रीय भावना को सबल बनाया । रोमन कानून की विधाओं में आस्था रखने वाले विद्वानों ने राजा के प्रति भक्ति की भावना को बढ़ाया ।

इन सब परिस्थितियों ने मिलकर राष्ट्रीय राज्यों के निर्माण में अपना योगदान दिया । ऐसे राज्यों में इंग्लैण्ड सबसे प्रथम था । लेकिन इसके साथ साथ यहां पर संसदीय प्रणाली का भी उदय व विकास हुआ । फ्रांस में राजा को ही शक्ति व अधिकार सौंपे गये । मुसलमानों को ग्रेनेडा से खदेडने के बाद स्पेन राष्ट्रीय राज्य बना । रूस में पीटर महान (1682-1725 ई0) ने इस दिशा में कदम उठाये ।

2.7 निषकर्ष मध्य युग के राजनीतिक संगठन और विचारधारा के प्रमुख लक्षण:

मध्यकालीन यूरोप में अधिकांश प्रदेशों में शासन का स्वरूप राजतन्त्र था । माईकेल गिलमोर (Micheal Gylmore) के मत में उस समय के राजतन्त्र की परम्परा जर्मनिक विचारधारा से ली गई थी और वह क्लासिकल (Classical) राजनीतिक सिद्धान्तों के अनुरूप पनपी थी । इटली के कुछ प्रदेशों, स्वडन के केप्टनों और पवित्र रोमन साम्राज्य के नगरों को छोड कर शेष यूरोप में राजतन्त्र स्थापित था । पश्चिमी यूरोप के देशों में राजा का पद वंशागत था लेकिन पूर्वी और उत्तरी यूरोप के देशों में उसका चुनाव होता था । माइरन गिलमोर ने लिखा है कि मध्यकालीन युग के अन्त में यूरोप की प्रशासनिक व्यवस्था द्वैतता (Dualism) पर आधारित थी । एक ओर राजा अपने अधिकारों, जिन्हें कि पारिभाषित किया जाता था, का प्रयोग करता था तो दूसरी ओर उसे अपनी प्रजा की भलाई और अधिकारों के प्रति सजग रहना पड़ता था । ऐसी परिस्थिति में राजा और प्रजा के बीच संघर्ष होना स्वाभाविक था । कभी राजा की शक्ति बढ़ जाती थी तो कभी प्रजा उसकी शक्ति को सीमित करने में सफल हो जाती थी । सामान्य रूप से इस प्रकार का संघर्ष राजा व उसके सामन्तों के पारस्परिक सम्बन्धों पर केन्द्रित रहता था । राजा व सामन्त एक दूसरे की शक्ति को कम करने के लिये सदैव प्रयत्नशील रहते थे । अन्त में राजाओं को सामन्तों की शक्ति को नियन्त्रित करने में सफलता मिली । इसमें उन्हें अनेक परिस्थितियों का सहयोग मिला । इसके फलस्वरूप इंग्लैण्ड को छोड कर अन्य देशों में राजतन्त्र निरंकुश हो गया । इंग्लैण्ड में भी टयूडर व प्रथम दो स्टुअर्ट (Stuart) शासकों ने निरंकुश होने के प्रयत्न किये ।

मध्यकालीन युग के पूर्व की राजनीति पर चर्च का गहरा प्रभाव था । इस युग में यह प्रभाव किसी हद तक बना रहा । पोप ने अनेक देशों की राजनीति में समय समय पर हस्तक्षेप

किया । स्थानीय आर्च बिशप व बिशपों ने भी अपने अपने देशों की राजनीति में सक्रिय भाग लिया ।

मध्य युग के अन्त में स्वतन्त्र नगरों का भी उदय हुआ। इटली में ऐसे कई नगर थे जो अपना प्रशासन स्वंय चलाते थे । स्पेन के अनेक नगरों में कम्यून का शासन था ।

इस युग के अन्त में पश्चिमी यूरोप के देशों में राष्ट्रीय राज्यों का उदय हुआ। इंग्लैण्ड को छोड़ कर शेष राज्यों के शासन का स्वरूप निरंकुशता की ओर अग्रसर होता गया । इंग्लैण्ड में इस समय से ही संसदीय प्रणाली का विकास आरम्भ हुआ।

शब्दावली:

गढी : सामन्तों की जागीर

काश्त : भूमि का वह भाग जिसकी उपज कृषि दासों को मिलती थी ।

डिमीन: जमींदारों की हवेली के साथ की लगी जमीन जिसकी उपज उसे मिलती थी ।

परती : भू-स्वामियों की सम्पदा के अन्तर्गत भूमि का वह भाग जिस पर खेती नहीं होती थी।

स्टेट्स जनरल : 1300 ई0 में फांस में गठित त्रि-सदनीय संस्था

क्यूरिया : सामन्तों की सभा

पार्लियामेन्ट ऑफ पेरिस : फ्रांस में कानून के मामलों पर विचार विमर्श करने के लिये राजा द्वारा गठित एक संस्था

गोल्डन बुल : 1356 ई0 में जर्मनी में राजा के चुनाव के लिये नवीन प्रणाली के सम्बन्ध में आदेश

विटानगेमोर (विटान) : इंग्लैण्ड के प्रभावशाली व्यक्तियों की एक परामर्शदात्री सभा

मैंगनम कौसिलम : विलियम प्रथम द्वारा इंग्लैण्ड के नगरों के प्रशासन के लिये स्थापित वृहद सभा

क्यूरिया रेजिस : विलियम प्रथम द्वारा इंग्लैण्ड में स्थापितशाही परिषद । इससे प्रिवी कौंसिल और प्रिवी कौंसिल से केबीनेट का विकास हुआ।

मेग्नाकार्टा : 1215. में इंग्लैण्ड के सम्राट जीन द्वारा स्वीकृत महाधिकार पत्र

2.8 अभ्यास के लिये प्रश्न :

(1) सामन्तवाद के उद्भव के बारे में विभिन्न विद्वानों के मतों की विवेचना कीजिए ।

(2) सामन्तवाद में राजा, सामन्तों और कृषकों के पारस्परिक सम्बन्धों पर प्रकाश डालिये।

(3) मध्यकालीन युग में पूर्वी फ्रांस, पश्चिमी फांस तथा इंग्लैण्ड में राजतन्त्र की प्रगति की संक्षिप्त में विवेचना कीजिये । इंग्लैण्ड संसदीय प्रणाली की ओर किस प्रकार अग्रसर हुआ?

(4) सामन्तवाद के पराभाव के कारणों का विश्लेषण कीजिए ।

(5) निम्नांकित पर टिप्पणी लिखिये :

अ- मध्य युग में पवित्र रोमन साम्राज्य

ब- राष्ट्रीय राज्यों के उदय के कारण

2.9 सन्दर्भ ग्रंथ :

Author Name of Book

1. Brown S.M., Medieval Europe
2. J. Thatcher & Schwill., A General History of Europe, Part I
3. H.A.L. Fisher, A History of Europe
4. C.W. Previte, Orton & Z.N. Brooke (Editors) The Cambridge Medieval History Orton & (Volume V to VIII)
5. Sydney Painter: A History of the Middle Ages (284-1500).
6. Carl Stephenos : Medieval Feudalism
7. Michael Gilmore: Age of Humanism (1453-1517)

इकाई - 3
सामन्तवाद की श्रेणियां एवं स्वरूप इकाई की रूपरेखा

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 सामंतवाद वातावरण और दो सामन्ती युग

3.3 यूरोप में सामन्तवाद का उदय

3.4 फ्रांस की विविधता: दक्षिण पश्चिम और नौरमंडी

3.5 इटली

3.6 जर्मनी

3.7 ऐंग्लो सेक्सन इंग्लैण्ड

3.8 उत्तरी-पश्चिमी स्पेन

3.9 सारांश

3.10 अभ्यासार्थ प्रश्न

3.11 संदर्भ ग्रन्थ

3.0 उद्देश्य:

इकाई न0 1 में "सामन्तवाद" की परिभाषा करते हुए, हमने उसकी उत्पति एवं विकास का निरुपण करने तथा उसकी कुछ प्रमुख विशेषताओं का उल्लेख करने का प्रयास किया था । इस इकाई में मध्ययुग में यूरोप के विभिन्न देशों में प्रचलित सामन्तवाद की विभिन्न श्रेणियों एवं स्वरुपों का परीक्षण एवं तुलनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करने का प्रयास किया जायेगा ।

3.1 प्रस्तावना

"सामन्तवाद" की अब भी एक ऐसी परिभाषा विकसित करनी होगी जो सर्वमान्य हो । निषेधात्मक बोध में प्रारम्भ करते हुए यह कहा जा सकता है कि यह पूंजीवाद की तरह कोई विश्व व्यवस्था नहीं थी । इतिहास के समग्र काल में सामन्तवाद एक असर्वव्यापी सामाजिक-आर्थिक संगठन का एक विशिष्ट रुप था जो काल और क्षेत्र की सीमा में अपनी विशेषता संजोये हुए था, जहाँ उत्पादन के विशिष्ट तरीकों एवं संस्थाओं का प्रतिपादन किया गया था । मार्क बॉक ने सामन्तवाद को सनिर्मित करने वाले तत्वों का सामिप्य रुप से उल्लेख किया है । इसमे शामिल हैं- एक आश्रित कृषक वर्ग वेतन (जिसे देने का प्रश्न हीं नहीं था) के स्थान पर सेवा के बदले भूस्वामी द्वारा प्रदत्त भूखण्ड, विशिष्ट योद्धाओं के वर्ग की सार्वभौमता, योद्धा वर्ग में आज्ञाकारिता एवं सुरक्षा के रुप में एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति को बॉधने वाले बन्धनों ने जागीरदारी के विशिष्ट स्वरुप वैसल व्यवस्था को ग्रहण कर लिया । सत्ता के विकेन्द्रीकरण ने अपरिहार्य रुप से अव्यवस्था की अभिवृद्धि की । इन सबके मध्य संघों के अन्य स्वरुपों का

अस्तित्व में रहना, परिवार व राज्य में से अन्तवाले याने राज्य ने द्वितीय सामन्ती युग में नवीन शक्ति प्राप्त की । ये यूरोपीय सामन्तवाद के मूलभूत लक्षणों जैसे प्रतीत होते है । आर कोलबोर्न (R, Coulborun) जैसे अन्य विद्वानों के लिये सामन्तवाद सरकार की एक प्रणाली है न कि आर्थिक और सामाजिक पद्धति । यद्यपि यह स्पष्टत: सामाजिक एवं आर्थिक वातावरण को परिवर्तित करता है एवं किया भी है । मौरिस डॉब (Maurice Dobb) ने सामन्तवाद को दासत्व के समकक्ष बताया है और अन्तवाले शब्द याने दासत्व को स्पष्ट रुप से एक अर्थ में शोषण का एक प्रकार बताया जो कि तथकथित अतिरिक्त आर्थिक अनिवार्यता के किसी रूप से लागू की जाती है और स्थाई रहती है ।

भारतीय विद्वानों में एस0 नुरुलहसन ने "सामन्तवाद" का अर्थ मुख्य रुप से एक ऐसी कृषि सम्बन्धी आर्थिक पद्धति के रुप में लिया, जहाँ गेर आर्थिक दबाव और कृषि एव सहायक हस्तकला उत्पादन क्षेत्र में अपनी भूमिका के द्वारा उत्पन्न अतिरेक सामन्य रूप से संकुचित शासक वर्ग में आपस में बॉट लिया जाता है । अन्यविद्वान प्रो0 आर0 एस0 शर्मा ने चौथी और तेरहवीं शताब्दियों के बीच के समय को "साम्यवादी" काल" बताया । उन्होंने यूरोपीय सामन्तवाद के कई लक्षणों को इस काल में भारत में विकसित हुए बताया ।

"सामन्तवाद" की कोई भी स्थैतिक परिभाषा पूर्णत: संतोषजनक नहीं हो सकती । सामन्तवाद भी अन्य पद्धतियों के समान निरन्तर विकसित होने वाली पद्धति है । दूसरी परिभाषाओं के स्वाभाविक सहज अनुमान के रूप में निम्न विचार गम्यता प्रस्तुत है ।

"सामन्तवाद" को किसी निश्चित प्रकार की चुनौतियों के प्रत्युतरों की श्रृंखला रूप में उल्लिखित किया जा सकता है । एक चुनौती जिसने समाज को प्रभावित किया वह थी- राजनीतिक व्यवस्था की गिरावट एवं कमजोर होना । इस प्रकार की पद्धति के विश्रृंखलन प्रतिक्रिया के रूप में पुनरर्चना की ओर कई कदम सामन्तवाद की ओर अग्रसर होते हैं । उन समाजों में जहाँ शक्तिशाली सामन्तवादी प्रवृतियॉ होती है वहाँ सामान्यतया कृषि की प्रबलता होती है तथा आर्थिक स्वार्थ स्थानीय होते हैं । वही दूर-दूर तक राजनीतिक संगठन के समर्थन का भार आर्थिक लाभों से पूरा नहीं होता है । जिन देशों में कृषि की प्रबलता होती है वहाँ स्थानीय प्रभावशाली वर्ग का अस्तित्व में होना सामान्य है । वे ही राजनीतिक सत्ता का अधिकांशतः उपभोग करते हैं । जब केन्द्रीय सरकार उन लोगों को आज्ञाकारी बनाये रखने में असफल हो गई तो इनकी वास्तविक शक्ति सहज में ही विधानतः हो गई जो उनके वंशजों ने विरासत में प्राप्त की । अन्त में यह कहा जा सकता है कि लार्ड-जागीरदार वर्ग के सैनिक एकाधिकार या निकट सैनिक एकाधिकार के बिना सामन्तवाद का अस्तित्व रह नहीं सकता है । यह एकाधिकार सहज ही समझ में तब आया जब युद्ध की नई तकनीकों का सूत्रपात हुआ, जो बड़ी खर्चीली सिद्ध हुई ।

3.2 सामन्तवादी वातावरण और दो सामन्ती युग:

'विद्वान वर्ग इस राय में सर्वसम्मत है कि पश्चिमी यूरोप में सामन्तवाद के दो पृथक चरण थे जो एक दूसरे से एकदम भिन्न थे । प्रारम्भिक अवस्था में सामन्तवाद राजनीति में प्रभावशाली तथ्य परन्तु इस तथ्य का कोई सैद्धान्तिक स्पष्टीकरण नहीं था । अपने उत्तरकालीन

चरण में सामन्तवाद अन्य प्रकार के राजनीतिक संगठनों से प्रतिस्पर्द्धा करता हुआ धीरे-धीरे अपना वर्चस्व खो रहा था ।

सामन्तवाद का प्रथम काल 1100 ई0 के लगभग उतरी फीस की संस्थाओं में उत्कृष्ट रूप से देखा जा सकता है । उतरी फ्रांस में एक आधारभूत संस्था जो एक छोटा सामन्तीय राज्य था स्थानीय लार्ड के प्रभाव में था । वह कोई भी पदवी धारण कर सकता था । वह सदैव नहीं पर सामान्यतया राजा का जागीरदार होता था । वह अपने क्षेत्र में अन्तिम सत्ता होता था और उसकी स्थिति उसकी सैनिक शक्ति पर आधारित होती थी । उसकी सेवा में प्रशिक्षित सैनिकों का एक समूह होता था, उसके पास उसकी समग्रभूमि पर दुर्गो से सुरक्षित सामरिक स्थल थे, उसके पास सेना व दुर्गो के खर्च के लिये पर्याप्त आर्थिक साधन थे । उसके प्रभाव क्षेत्र में छोटे लार्ड भी हो सकते थे उन्हें सुरक्षा के लिये या उनकी अपनी न्यून सैनिक शक्ति ने, उनके समक्ष उसकी अधीनता स्वीकार करने के अतिरिक्त, कोई दूसरा विकल्प नहीं छोड़ा हो । इस प्रकार के सम्बन्धों की 'कोई परिभाषा नहीं थी । सामन्त द्वारा नियंत्रित प्रदेश के क्षेत्र और सता में अनेक उतार-चढ़ाव हो सकते थे । ये उतार-चढ़ाव न केवल एक वंश से दूसरे वंश तक लेकिन एक दशक से दूसरे दशक तक आ सकता था । केवल सरकर संचालन की प्रणाली ही अपेक्षाकृत स्थायी थी । एक क्षेत्र के रीति-रिवाज भी लगभग वे ही रहते थे ।

सामन्तवाद का दूसरा चरण तेरहवीं शताब्दी की समग्र कालावधि में आता है । इस समय जागीरदारी के सम्बन्ध ऊपरी स्तर पर कठोर हो गये और नीचे स्तर पर ढीले होने लगे । एक प्रान्त का शासक अपने से उच्च की आज्ञा का सम्मान करता था और अपने से छोटों की कम सेवा प्राप्त करता था । प्रारम्भिक काल से भिन्न स्थानीय लार्ड व्यवहार में अब भी कई मुख्य कार्य करता था परन्तु वह ऊपरी सत्ता से निर्देशित व नियंत्रित किया जा सकता था । प्रदेश के छोटे जागीरदार सीधे उच्चतम सता को अपील कर सकते थे और कुछ मामलों में उच्चतर सत्ता स्थानीय लार्ड की उपेक्षा करते हुए छोटे जागीरदार से सीधा व्यवहार कर सकती थी । रीयल कानूनी न्यायालयों के विकास ने स्थानीय लार्ड की सत्ता को और अधिक नियंत्रित कर दिया । सामन्तवाद के दूसरे चरण में, जो अधिक संगठित था, कर्तव्य और अधिकार स्पष्ट एवं विस्तृत रूप में उल्लेखित किये गये । बल अभी एक महत्वपूर्ण था परन्तु वह केवल राजा तथा लार्डों के पास ही था जो इसके उपयोग द्वारा लाभ प्राप्त कर सकते थे । प्रथम चरण से दूसरे चरण में परिवर्तन बड़ी सुगमता से हो गया । प्रथम चरण में रोमन कानून और चर्च के ईसाई राजतंत्र के विचारों का अभाव था परन्तु फिर भी अनुशासन और विकास के कुछ सिद्धान्त अवश्य रहे होंगे। प्रारम्भिक सामन्तवादी समाज यद्यपि अव्यवस्थित था परन्तु वह कभी भी पूर्ण अस्त-व्यस्त नहीं था और प्रत्येक स्थिति में आदिम सरकार से अधिक सधा हुआ था।

3.3 यूरोप में सामन्तवाद का उदय:

हमने देखा कि पश्चिमी यूरोप में सामन्तवाद के दो पृथक चरण थे। अब हम यह देखने का प्रयास करेंगे कि सामन्तवाद ने प्रथम बार यूरोप को किस प्रकार प्रभावित किया और यह पश्चिम के विभिन्न देशों व इंग्लैण्ड में किस प्रकार विकसित हुआ ? सातवीं शती के लगभग रोमन साम्राज्य मुख्यत: इसलिए ध्वस्त हो गया कि उसके निवासी उसकी सुरक्षा के पर्याप्त

प्रयत्न करने में असफल रहे। जर्मन वंश के राजा जो रोमन सम्राटों के उतराधिकारी बने, वे रोमन सभ्यता के विरोधी नहीं थे, अत: रोमन सभ्यता का अधिकांश अब भी सुरक्षित था। नये शासकों ने केन्द्रीय सस्ता की शक्ति को बनाये रखने का प्रयास किया और स्वतंत्र स्थानीय लार्ड-शिप के विकास को रोकने का प्रयत्न किया। जर्मनवंशीय शासकों में महानतम शार्लमेन ने पश्चिमी यूरोप के एक बड़े भू-भाग को एक नये साम्राज्य के रूप में एकीकृत किया। संगठित लेटिन व जर्मनवंशीय लोगों में न तो समान राजनीतिक परम्पराऐं थीं न ही समान सांस्कृतिक परम्पराऐं ही और आर्थिक सम्बन्ध नगण्य थे। शार्लमेन अपने साम्राज्य को चर्च के नैतिक समर्थन और अपने लोगों-फैंको की सेना की शक्ति के सहयोग से व्यवस्थित रूप से संभाले रखने में सफल रहा। यद्‌यपि शार्लमेन ने एक सामान्य यूरोपीय सभ्यता की नींव रखने का प्रयत्न किया पर स्थानीय शक्तियाँ अभी तक एकता स्थापित करने वाली शक्तियों से कहीं अधिक शक्तिशाली थी। स्थानीय सरकार धन और पद वाले काउन्ट्स (Counts) के हाथों में थी, जो राजा से अधिकार प्राप्त करते थे पर वे हमेशा उसके आज्ञाकारी नहीं थे। तो यह काउन्ट्स भी सदा अपने जिलों के बड़े-बड़े भूस्वामियों को अपने अधिकार में रखने में सफल नहीं होते थे। इतिहास के इस काल तक जागीरदारी आम होती जा रही थी और कुछ समानता वाली जागीरदारी तत्पश्चात् द्दष्टिगोचर हो रही थी। रईस अथवा स्थानीय लार्डों के अपने अधिकारियों से सम्बन्ध अधिक प्रगाढ़ थे, जबकि राजा व रईसों से सम्बन्ध इतने गहरे नहीं थे।

शार्लमेन के उत्तराधिकारी अयोग्य थे। तदनन्तर स्थानीय लार्डों या रईसों ने अपनी स्वतंत्रता जतानी प्रारम्भ कर दी। उनका पद उनकी निजी सम्पति बन गई जो कि उनके पुत्रों को हस्तांतरित की जानी थी। शार्लमेन साम्राज्य का छिन्न-भिन्न होना भी यूरोप में आक्रमणों के युग में प्रारम्भ हुआ, जिसकी अन्तिम पराकाष्ठा "सामन्तवाद" की स्थापना में हुई। सेरसेनीज (Saracens) ने फ्रांस के दक्षिणी तट और इटली के पश्चिमी तट पर हमले किये। मेग्यार्स (Magyars) ने हंगरी पर कब्जा कर लिया और इसे आधार बनाकर उन्होंने एक बड़ी अश्वसेना दक्षिणी जर्मनी, पूर्वी फ्रांस और उत्तरी इटली में अभियान के लिये भेजी। सबसे निकृष्ट हमलावर नॉर्थन मैन या वाइकिंग्ज (Northern Men or Vikings) उतरी यूरोप से आने वाले लोग थे। उनके छिछले पानी में भार ढोने वाले जहाजों ने उतरी यूरोप की सारी नदियों को पार किया और उन्होंने हमलावर दल भेजें जिन्होंने ग्रामीण इलाकों में लूटमार की। इन झुण्डों के विरुद्ध केन्द्रीय सरकार भी शक्तिहीन थी। इसलिए सुरक्षा एक स्थानीय जिम्मेवारी हो गई। केवल स्थानीय लार्ड और उसके गढ़ ही उसके साम्राज्य के अधिकतर नागरिकों को सुरक्षा प्रदान कर सकते थे। इन परिस्थितियों में सामन्तवादी सरकारें शुरु में उतरी फ्रांस से प्रथम दिखाई देने लगी। यद्‌यपि प्रारम्भ में वे ठीक तरह से व्यवस्थित नहीं थी पर भविष्य में होने वाले दो लाभों ने इसके विकास को शकुनीक बना दिया। प्रथम तो सुविधाभोगी व्यक्तियों को जिम्मेदारी धारण करनी पड़ी। दूसरा यह कि सामन्तवाद ने सरकार के ढांचे का सरलीकरण इस हद तक किया कि लोगों ने इसमें भाग लेना प्रारम्भ कर दिया। लोगों के भाग लेने से उन्नत सरकारों का निर्माण हुआ जहॉ योग्य सामन्तों ने उन्नत सरकारों के लिये प्रयत्न प्रारम्भ किये। संक्षेप में सामन्तवाद ने

समयातीत संस्थाओं को समाप्त कर दिया और उनके स्थान पर अधिक लचीली संस्थाओं का सृजन किया।

इतना उल्लेख करने के बाद अब हम यूरोप के देशों की ओर मुड़ते हैं जहॉ सामन्तवाद विभिन्न श्रेणियों और प्रतिरूपों में अपने प्रथम व द्वितीय चरणों के दौरान फला फूला।

3.4 फ्रांस की विविधता: दक्षिण पश्चिम और नोरमंडी

फ्रांस में अधिकतम भौगोलिक विविधताऐं विद्यमान है। इस प्रकार एक संस्थाओं का समूह शक्तिशाली विभिन्नताओं से अलग-अलग पहचान बनाए हुए है पर किसी तरह से राष्ट्रीय एकता के बन्धनों में बन्धे हुए हैं। दक्षिण के क्षेत्र में जो एक्यूटेनियन साउथ (Aquitanian South) कहा जाता है जिसमें Toulouse, Gascony और urenne जैसे क्षेत्र सम्मिलित है, इसका सामाजिक ढांचा बहुत ही विशिष्ट था और जिस पर फ्रेंकिश संस्थाओं का बहुत ही कम प्रभाव था। एलोडस (Allods)- छोटे कृषि भूखण्ड और जमीदारियॉ (पूर्व इकाई में परिभाषित) एक लम्बे अरसे तक विद्यमान रही। जागीर (फीफ-सामन्ती सम्बन्धों की मुख्य ईकाई या कड़ी) भी दसवीं शताब्दी में इस क्षेत्र में अपने अस्तित्व में आई। परन्तु बारहवीं शताब्दी तक इस अर्थ में केवल सभी प्रकार के भूखण्ड (भूस्वामी अधिकार द्वारा ली गई वस्तु) सम्मिलित थे, जिनमें उदार किराया, वस्तु या कृषिश्रम सेवा के रुप में था। जब उतरी लोग (North Men) फ्रांस में बसे तो उन्हें "फीफ (Fief)" तथा वासलेज (Vassalage) जैसी संस्थायें नयी लगी लेकिन वे उच्च रूप से विकसित थी। विजयी नरेशों ने इस सामन्ती बन्धनों के जाल का अपनी सता को मजबूत बनाने में प्रयोग किया। परन्तु जागीर प्रथा (Feif holiding) का क्रियान्वयन अलग-अलग स्तरों व वर्गों के अनुसार हुआ। राजा की अवज्ञा करने वाले जागीरदार थे और वावासोर (Vavasour) भी थे। अन्तवाला याने वावासोर जागीरदारों की सबसे कनिष्ठ गरिमा श्रेणी थी। सशस्त्र सेवाओं के आभार के अतिरिक्त कभी घोड़े की पीठ पर, कभी पैदल सेवारत वावासोर श्रेणी के जागीरदार को किराया भी देना पड़ता था और कभी-कभी श्रम सेवायें भी अर्पित करनी पड़ती थी। यह वास्तव में आधी जागीर थी और अध्द दासत्व था। यह इस प्रकार सामन्तवाद ने फ्रांस में अपनी जड़े जमाई।

3.5 इटली-

लोम्बार्डियन इटली में व्यक्तिगत निर्भरता के सम्बन्धों के तत्काल विकास को देखा जो हर प्रकार से फ्रांस में प्रचलित सम्मानों के समकक्ष था चाहे एक व्यक्ति की सेवा से लेकर सैनिक संस्थान में सेवा तक क्यों न हो। युद्ध साथियों को (राजा, डयूक इत्यादि ने घनिष्ठ अनुगामी) घासिन्दी (Gasindi) का नाम दिया गया। अनेक लोगों के पास सम्पति थी जो अधीनता को बरकरार नहीं रखने पर वापस राजा को देनी पड़ी। एक नया महत्वपूर्ण तथ्य यह था कि राजा और युद्ध साथियों के बीच बन्धन समाप्त किये जा सकते थे। वे दोनों पक्षों को बाधित नहीं थे। इटली में जर्मन आक्रमणकारियों का प्रभाव स्पष्टतया देखा जा सकता है। इस प्रकार "फीफ" शब्द इटालियन शब्दावली में सम्मिलित किया गया। प्रारम्भ में इसका अभिप्राय चल सम्पति से था पर दसवीं शताब्दी में इसका अर्थ सैनिक को दी जाने वाली सम्पति से हो

गया। इसी समय के आसपास गैलो-फ्रैंकिश (Gallo-Frankish) शब्द वासल (Vassal) ने धीरे-धीरे इटेलियन शब्द (Gasindus) (पूर्व संदर्भित) का स्थान ले लिया।

विदेशी कुलीन कई सामाजिक मूल्यों को अपने साथ लाये जिनको इटालवी पद्धति ने शीघ्र ही अपना लिया। राजा और जागीरदार को बांधने वाले समबन्ध एकदम गुत्थ गये और ठोस बन गये। इटली के सामन्तवाद ने आधिक्य रूप में फ्रांस के सामन्तवाद की उन्नति व विकास के पथ का अनुगमन किया। ग्यारहवीं शताब्दी के प्रारम्भ से इटली ने सामन्ती बन्धनों की प्रकृति पर प्रभाव डालने वाले कई अध्यादेश जारी किये। "स्वामीभक्ति की शपथ" ने सामन्ती बन्धनों में अग्रमिता ली। यह एक महत्वपूर्ण कृत्य था जो किसी प्रकार से औपचारिक रूप नहीं लिखा गया परन्तु फिर भी यह दायित्व के बन्धनों में एक प्रमुख प्रक्रिया थी।

इटली के सामन्तवाद की महत्वपूर्ण विशेषता थी पोप सरकार पर सामन्तवादी संस्थाओं का प्रभाव। 999 A.D. में पोप Sylerster II ने पाया कि यद्यपि जायदादें चर्च द्वारा प्रदान की जाती थी, वेटिकन अनुदानों में जागीर और उसके फलस्वरूप होने वाले दायित्व का अभाव है। उसने जागीर तत्व को चर्च के अनुदानों में प्रचलित करने का प्रयास किया पर वह उसमें बहुत अधिक सफल नहीं हुआ। परन्तु उसके उत्तराधिकारियों के समय में जागीर और अधीनता की नियमित स्वीकृति ने धीरे-धीरे पोप सरकार की पद्धति में प्रवेश किया।

3.6 जर्मनी

मेज और फाइन प्रांत प्रारम्भ रूप से ही साम्राज्य के आन्तरिक अंग थे जो क्लोविस (Clovis) द्वारा स्थापित किये गये थे। केरोलिंजियन (Carolingian) सत्ता के केन्द्र थे। जर्मन राज्य जिसने दसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में निश्चित स्वरूप प्राप्त किया, इसमें कई वृहद् क्षेत्र सम्मिलित थे जो इन क्षेत्रों के समाज द्वारा बड़े निर्मित विजातीय मानवसमूह गाल्स फ्रेंकिश (Galls Frankish) से बाहर थे। इन सब क्षेत्रों में राइन और एल्ब के बीच सेक्सन (Saxon) मैदान प्रमुख था। शार्लमेन के समय से ही पश्चिमी गुट में लाये गये थे। जागीर और जमींदारी संस्थायें फेनिश (Phenish) जर्मनी के आरपार यद्यपि फैली हुई थी। नियमित अधीनता का अर्थ जर्मनी में उच्च वर्ग की शुद्ध अधीनस्थता से था। बहुत ही कम अवसरों पर अपवाद रूप में वासल को मित्रता के चुम्बन सहित हाथ मिलाने का अवसर आता था जिससे वे एक ही स्तर पर आते थे।

जर्मनी में सैनिक सेवा और जमीन जोतने के बीच अन्तर तथा विभिन्न वर्गो के बीच विभाजक रेखा ने जड़ें पकड़ने में काफी लम्बा समय लिया। दसवीं शताब्दी के प्रारम्भिक वर्षों में राजा हेनरी प्रथम ने योद्धाओं को किलों के निकट में बसाने की प्रथा का श्रीगणेश किया। वे केवल आक्रमण के समय किले की व्यवस्था करने के लिये आते थे और उसके बाद कृषि करने के लिये लौट जाते थे। इस प्रकार ये लोग असली खेतिहर थे जो अपने हाथों से खेती करते थे।

जर्मन सामन्तवाद की दो विशेषताऐं प्रत्यक्ष थी, जिन्होंने जर्मन समाज में सामन्तीकरण के विकास की बाधाऐं उत्पन्न करने का प्रयास किया। एक दृष्टिकोण तो यह था कि बड़े लोगों की पूर्ण स्वामित्व वाली सम्पति को राजा छू नहीं सकता था। जागीरें रोकी जा सकती थी पर पूर्ण स्वामित्व वाली जायदाद वंशानुगत सिद्धान्तों से प्रशासित होती थी। दूसरा दृष्टिकोण यह था

कि जागीर और जमींदारी को प्रशासित करने वाले कानूनों को पृथक वैधानिक पद्धति माना जाता था। ये कानून यूरोप के अन्य भागों के समान सम्पूर्ण ढांचे में गुत्थे हुए नहीं थे।

3.7 ऐंग्लो सेक्सन इंग्लैंड-

प्रारम्भिक काल से ही ब्रिटिश द्वीपवासी जर्मन प्रभावों से विमुक्त नहीं थे। "सामन्तवाद" के इतिहासकारों ने आठवीं और नवीं शताब्दियों के अंग्रेजी समाज के ढांचे को जर्मन समाज के ढाँचे के समान ही बताया है। परन्तु इस समाज ने ग्यारहवीं शताब्दी तक विकास क्रम को करीब-करीब पूर्ण रूप से स्वत: ही अपनाया। इग्लैंड में निर्बल आदमी की सुरक्षा और मजबूत आदमी की सत्ता की आकांक्षा की आवश्यकता को कोई भी परख सकता था। इन सम्बन्धों ने दोनों को विदेशी आक्रमणों, विशेषतया नवीं शताब्दी के पश्चात् डेनिस आक्रमणों का सामना करने की स्थिति को अधिक घनिष्ठ बना दिया। राजा लोग निर्बलों के संरक्षक थे, उन्होंने पूर्ण समर्पण पर जोर दिया और उद्घोषित किया कि यह अनुबन्ध सार्वजनिक व्यवस्था के हित में था। दसवीं शताब्दी और उसके पश्चात् अगर कोई आदमी स्वामी रहित था- (जो आगे ऐसा कोई आदमी नहीं था जो किसी शक्तिशाली व्यक्ति या राजा के स्वामीत्व में नहीं था) उसे कानूनन सम्पूर्ण रूप से बहिष्कृत किया जाता था और उसका पीछा करते हुए उसे कानून के नाम पर मारा जा सकता था। राजा अपने योद्धाओं और सैनिक अधीनस्थों को अपने लाभार्थ ही काम में लेता था। वे सम्पूर्ण साम्राज्य में फैले हुए थे और उनको सार्वजनिक हित के असली कार्य सौंपे हुए थे।

राजा के सशस्त्र अधिकारी या रईस (उच्चवंशीय व्यक्ति), कुलीन व्यक्ति एवं गैर कुलीन योद्धाओं के रूप में विभाजित थे। समय के अन्तराल ने इस खाई को और चौड़ा कर दिया। पूर्व वर्ग में बहुत कुशल योद्धा थे, उन्हें "नाइट" (Knight) कहा जाता था। बाद वाले वर्ग में सामान्य कृषक थे जिन्हें केवल युद्ध के समय सेवा प्रदान करने के लिये आहूत किया जाता था। नाइटस (Knights) ही केवल विशेषाधिकार प्राप्त वर्ग था जो इस तथ्य से सिद्ध हो जाता है कि उन्हें घुड़सवारी का प्रशिक्षण दिया जाता था। पैदल सेना जिसमें गैर-कुलीन योद्धा थे, यह पूर्ण रूप से प्रशिक्षित नहीं थी और यह 1066 ई0 की हेस्टिंग्ज की लड़ाई के परिणाम का प्रमुख तथ्य था।

संरक्षित सम्बन्ध (एक व्यक्ति को उसके स्वामी से बांधने वाले) बिना किसी बाधा समाप्त किये जा सकते थे।

यह सत्य है कि कानून एक आदमी को उसके स्वामी की अनुमति के बिना उसे छोड़ने को प्रतिबंधित करता है परन्तु इस अनुमति का परित्याग नहीं किया जा सकता था जब तक कि सेवाओं के बदले में प्रदत्त सम्पति को पुन: लौटा दी गई हो और भूतकाल में किसी प्रकार का आभार पूर्ति बाकी नहीं हो। इस प्रकार एक प्रमुख अधिकार जो योद्धा के पास निहित था, वह था अपने नये लार्ड का चयन का अधिकार।

योद्धाओं व अधिकारियों को प्रदत्त सम्पति दोनों प्रकार की थी। प्रथम फेसी प्रदत्त जायदाद, जिसमें अनुदान प्राप्तिकर्ता के पूर्ण स्वामित्व के साथ वंशानुगत अधिकार भी थे। दूसरे प्रकार में जायदाद जब तक अनुदान प्राप्तिकर्ता के पास रहती थी, वह सेवायें अर्पित करता था या उसके जीवनकाल तक रहती थी। दुहरी प्रवृति वाले मामले भी थे। एक व्यक्ति को जायदाद

स्वीकृत की जा सकती थी, पूर्ण स्वामित्व नहीं परन्तु अपने अनुदान प्राप्तिकर्ता की स्वीकृति से वह दूसरे लार्ड की सेवा कर सकता था। यह द्वैध व्यवस्था केवल इंग्लैंड में ही प्रचलित थी।

3.8 उत्तरी-पश्चिमी स्पेन:

उतरी-पश्चिमी स्पेन (Austurias, Lion, Castile, Galicia- और बाद में पुर्तगाल से सृजित) सामन्तवाद के बढ़ते हुए प्रभाव से मुक्त नहीं रह सका क्योंकि पेरेनीज (Pyrenees) के दर्रो को फ्रांस के नाइटस व पादरी धड़ल्ले से रौंदते हुए चले गये। यही फिर निजि निर्भरता के बन्धन दृष्टिगोचर होते हैं। मुखियाओं व लार्डो के पास उनके घरेलू योद्धा थे, जिन्हें 'Cridades' कहते थे। "वासल" शब्द भी उनके लिये प्रयुक्त होता था। नियमित अधीनता (Homage) शब्द भी बहु प्रचलित था। इस समाज को भी भूमि प्रदान की जानकारी थी पर इसमें एक अन्तर दृष्टिगोचर होता था। राजा और सरदार लोग अक्सर मूरिश क्षेत्रों के अभियानों से लूट का अथाह माल लेकर आते थे। अधिकारी गण इस लूट के माल के बजाय कृषि योग्य भूमि को अधिक महत्व देते थे।

मूरों से पुन: विजित व व्यवस्थित जमीन पर पुन: दावा पेश किया गया जिससे किसानों के पास छोटे-छोटे भूखण्डों का सृजन प्रारम्भ हुआ। ये कृषक अपने यूरोप के किसानों से अधिक स्वतंत्र थे। वे प्रभावशाली योद्धा थे क्योंकि उन्हें अपरिभाषित सीमाओं की रखवाली करनी पड़ती थी। आगे नाइट्स के अतिरिक्त (वे जिनके पास जायदाद थी) एक "कृषकीय नाइटहुड" (Peasant Knight hood) थी। ये धनाद्य स्वतंत्र कृषक थे जो अपनी शर्तो के अनुसार युद्ध काल में सेवायें अर्पित करते थे।

3.9 सारांश:

इस प्रकार हमने यूरोप के विभिन्न देशों में सामन्तीय सम्बन्ध व प्रभावों के उदय का परीक्षण किया। प्रत्येक देश में स्थानीय वातावरण ने उस देश में "सामन्तवाद" सृजन में निर्णायक भूमिका निभाई। विद्वान लोग अब भी चाउमीन, मेसोपोटामिया, मिश्र, भारत, रूस और बाइजेन्टियम (Byzantium) जैसे प्रदेशों में इसी प्रकार के सामन्तताद के विकास की सम्भावनाओं पर वाद-विवाद प्रस्तुत करने की ओर झुकाव रखते हैं। यद्यपि यह वाद-विवाद अन्तहीन है, यह कहा जा सकता है कि यही प्रारम्भ में दी गई परिभाषा व्यापक रूप में पश्चिमी यूरोपीय संस्थाओं पर लागू होती है।

3.10 अभ्यासार्थ प्रश्न:

(i) सांमतवादी वातावरण का विश्लेषण दीजिये।

(ii) यूरोप में सामन्तवाद का उदय कब और कैसे हुआ?

(iii) यूरोप के विभिन्न देशों में सांमन्तवाद की प्रमुख विशेषता बताइये।

3.11 संदर्भ ग्रन्थ:

Marc Block : Feudal Society

R. Coulbourn : Feudalism in History

Maurice Dobb : Studies in Development of Capitalism.

F.L. Gansh of : Feudalism

F.Lot : The End of the Ancient World and the Beginning of the Middle Ages

इकाई-4
टर्की की राजनीति, अर्थव्यवस्था और समाज

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 टर्की की राजनीतिक विकास और प्रारूप

4.3 टर्की की सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था

4.3.1 समाज का स्वरूप

4.3.2 सामाजिक वर्गीकरण

4.3.3 कानून व्यवस्था

4.3.4 मुख्य तत्कालीन संस्थाऐं

4.4 आर्थिक व्यवस्था

4.5 सारांश

4.6 अभ्यास कार्य

4.7 संदर्भ ग्रन्थ

4.0 उद्देश्य

अधिकतर विद्यार्थी टर्की के इतिहास को एक यूरोप या विश्व इतिहास के संदर्भ में पढ़ते हैं तो उनके मस्तिष्क में "यूरोप का बीमार आदमी" का चित्र आता है, परन्तु इस इकाई में जब हम टर्की की राजनीति, अर्थव्यवस्था और समाज के बारे में जानने का प्रयास करते हैं तो विद्यार्थी को यह ज्ञात होकर आश्चर्य होगा कि ओटोमन साम्राज्य अपनी चरम सीमा पर आधुनिक आलबानिया, यूनान, बलगेरिया, यूगोस्लाविया रोकाविया, हंगरी और रूस के कुछ भाग, ईराक, सीरिया, पेलिस्टाइन, मिश्र, अल्जीरिया, और अरब के कुछ भाग पर विजय प्राप्त कर चुका था।

मध्यकालीन इतिहास में इस्लाम धर्म और राजनीति में निसन्देह अरबों की भूमिका अग्रगणीय है परन्तु तुर्की मानो की विश्व इतिहास में इस समय जो भूमिका थी उसे इस्लाम धर्म से सम्बन्धित इतिहासकारों ने भी इतना प्रकाश में नहीं लाया जितना कि इस इकाई के अध्ययन के बाद पता चलता है। उस समय भी चार महान सभ्यताओं की तुर्की खानों से सम्पर्क स्थापित हु आ। यह चार सभ्यतायें थीं, चीन, भारत, बाइज़ेन्टाइन और ईरान।

प्रस्तुत इकाई में हम टर्की के सामाजिक और आर्थिक ढांचे का भी अध्ययन करेंगे। इसमें तुर्की, कवीले, उनके कानून, ओटोमन साम्राज्य सरदार, सुल्तान, शारियत सिविल कानून, जाने साकी, देव शिर इत्यादि, व आर्थिक व्यवस्था शामिल है।

4.1 प्रस्तावना

17 वीं शताब्दी में एक डच मानवतावादी ने, जिसका नाम सिलारियस था, विश्व इतिहास को तीन कालों में बांटा था, प्राचीन, मध्य और आधुनिक। तब से इस विभाजन को माना जाता रहा है। यह ध्यान रखना चाहिये कि किसी एक युग का अंत और दूसरे युग का आरम्भ किसी एक तिथि को नहीं होता, वह तो एक प्रक्रिया होती है जो धीरे-धीरे चलती रहती है। इस प्रकार का काल-विभाजन केवल सुविधा की दृष्टि से किया जाता है।

इस प्रकार का काल-विभाजन एक सामान्य व्यक्ति की इस विचारधारा से मेल खाता है कि हमारी पृथ्वी ने केवल दो प्रगति काल देखे, हैं, एक तो युनानी और रोमन सभ्यता और दूसरा आधुनिक खोजों का समय। इन दो कालों के बीच का समय मध्यकालीन युग था, जिसके बारे में गलत धारणा है कि उस समय का मानव अज्ञान और अन्ध-विश्वास से घिरा हुआ था। "मध्यकालीन" शब्द को प्रतिक्रियावाद से जोड़ दिया गया है। परन्तु आधुनिक सुधारवादी विचारक को आश्चर्य होता है जब वह देखता है कि उसके आधुनिक विचार बहुत से मध्यकालीन विचारकों के विचारों से मिलते-जुलते हैं।

इतिहासकार जे. ई. स्वेन ने मध्यकालीन सभ्यता के महत्व को समझाते हुए कहा है कि मध्यकालीन युग का मुख्य उद्देश्य मानव-और-समाज में एकरूपता और तारतम्य पैदा करना था। उस काल का मानव किसी एक समुदाय का सदस्य था, अपनी इच्छा से नहीं अपितु ईश्वर के हस्तक्षेप के कारण, और वह उसे बदल भी नहीं सकता था। सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक तथा आर्थिक सभी क्षेत्रों में एकता उस समय का आदर्श था। सभी संस्थाओं में सता के प्रति सत्कार और केन्द्रीयकरण की भावना विद्‌यमान थी। विचारों की भिन्नता के लिए कोई स्थान नहीं था।

मध्यकालीन युग को आधुनिक इतिहास की आधारशिला कह सकते हैं। इसी युग में बाइजेनटाइन सभ्यता का विकास हुआ और पूर्व की सभ्यता पश्चिम की तरफ गई, जहां उसे एक नया जीवन मिला, जो कि पुनर्जागरण काल में पुष्पित हुआ। हमारा धर्म, दर्शन, शिक्षा, विज्ञान, भाषा, कला और शासन यह सब मध्यकालीन युग से पैदा हुए जिसमें एक लम्बी विकास की प्रक्रिया थी।

इस लेख में हमारा उद्देश्य टर्की (जिसे तुर्की भी कहा जाता है) के मध्यकालीन काल में उसकी राजनीति, अर्थव्यवस्था और सामाजिक ढ़ाचे का अध्ययन करना है। जिस समय अरब का साम्राज्य पतन और विभाजन की और उन्मुख होने लगता है तो दसवीं शताब्दी में अनिश्चतता का वातावरण पनपने लगता है। इस समय मध्य एशिया के टर्क (तुर्क लोग) मुस्लिम सभ्यता को एक नया जीवन प्रदान करते हैं। टर्क और मंगोल एक ही कबीले से सम्बन्धित थे पर इनमें टर्क अरब सभ्यता के सम्पर्क में आये। इन टर्क कबीलों में सबसे अधिक प्रगतिशील सेलजुक थे जिन्होंने इस्लाम को उत्साह और जोश के साथ कबूल किया और इस्लाम के जबरदस्त प्रचारक बने। जबकि अरब शान्ति की कलाओं का विकास कर रहे थे, तुर्क इस्लाम की शक्ति का विकास कर रहे थे।

4.2 टर्की का राजनीतिक विकास और प्रारूप

इतिहासकार जे. एम. रोबर्टस ने टर्की के ऐतिहासिक स्त्रोतो की कमी के बारे में कहा है कि टर्की का इतिहास पंद्रहवीं शताब्दी के पूर्व कठिनता से मिल पाता है। ऐतिहासिक सामग्री के लिए हमें दूसरे लोगों के द्वारा दी गई सामग्री पर निर्भर होना पड़ता है। जहां तक पुरातत्व सामग्री का प्रश्न है, वह भी पूर्ण मात्रा में नहीं मिलती। लेकिन इतना निश्चत है कि एशिया में एक कबीले में राजनीतिक ढांचे का विकास हुआ। उस समय की चार महान सभ्यताओं को तुर्की खानों से सम्पर्क स्थापित करना पड़ा। यह चार सभ्यतायें थी, चीन, भारत, बाइजेनटाइन और ईरान। इन तुर्की खानों ने उस सम्पर्क से बहुत कुछ सीखा। तुर्की ने लिखने की कला सीखी। पहला तुर्की अभिलेख आठवीं शताब्दी का मिलता है।

तुर्की गुलामों का मेमेलूक्स ने खलीफाओं की सेनाओं में अपनी सेवायें दी थी। लेकिन दसवीं शताब्दी में तुर्की लोग स्वयं अपने राज्य के लिये निर्माण के लिए आगे बढ़ने लगे। इन तुर्क कबीलों में सबसे आगे ओगज तुर्क थे जो पुराने खलीफाओं के राज्य में आगे बढ़कर, अपने नये राज्य बनाने लगे। इन कबीलों में एक का नाम था "सेलजुक्स"। यह इसलिये प्रसिद्ध हुये क्योंकि वह पहले से ही मुस्लिम थे। नये तुर्की राज्यों के बहुत से नेता पहले अरब-ईरान राज्यों के गुलाम सैनिक थे। ऐसा ही एक राज्य गजनी था जिसका बहुत विस्तार हुआ था, और जो कुछ समय के लिए भारत तक फैला था। लेकिन गजनी के यह कबीले दूसरे कबीलों के द्वारा भगा दिये गये। "ओगज" तुर्की कबीले काफी मात्रा में ईरान पहुंचे जिससे ईरान के सामाजिक तथा आर्थिक ढ़ाचे में बड़ा परिवर्तन हुआ। ओगज तुर्क पहले से मुस्लिम थे, इसलिए उन्होंने ईरान की संस्थाओं का आदर किया। उन्होंने अरबी और फारसी ग्रंथों का तुर्की में अनुवाद किया। इस प्रकार से तुर्की लोगों का अरब सभ्यता से नजदीकी संपर्क स्थापित हुआ।

11 वीं शताब्दी के आरम्भ में "सेलजुक्स" ने ओक्सस नदी को पार किया। इसके फलस्वरूप दूसरे तुर्की साम्राज्य का निर्माण हुआ जो कि 1194 तक चला और अनातो लिया (तुर्की) में तो 1243 तक चला। सेलजुक्स पूर्वी ईरान से ईराक की ओर पहुँचे और उस पर अधिकार कर लिया। इस प्रकार सेलजुक तुर्क मध्य एशिया के पहले आक्रमणकारी थे जिन्होंने ऐतिहासिक काल में ईरान के प्लेटियों से आगे बढ़कर अपना राज्य जीता। सीरिया और पेलिसटाइन पर अधिकार करने के बाद उन्होंने एशिया माइनर पर अधिकार कर लिया। यहां तक कि उन्होंने तत्कालीन बाइज़ेन्टाइन राज्य की विशाल शक्ति को उस समय की सबसे करारी हार पहुँचाई। यहां पर "सेलजुक्स" ने जो सल्तनत स्थापित की उसे "रम की सल्तनत" कहा क्योंकि उन्होंने अपने आप को रोम साम्राज्य का उत्तराधिकारी समझा। इस तरह से बाइज़ेन्टाइन साम्राज्य के "पवित्र रोमन साम्राज्य" में इस्लाम ने प्रवेश पा लिया। इससे दो बातें सामने आयी। एक तो यह कि पश्चिम में धार्मिक जोश पैदा हुआ, और दूसरा कि एशिया माइनर तुर्को के लिए खुल गया।

सेलजुक्स तुर्को ने कई तरह से महत्वपूर्ण ऐतिहासिक भूमिका निभाई। उन्होंने एशिया माइनर को ईसाई धर्म से इस्लाम में परिवर्तित किया और धार्मिक युद्धों को भड़काया, और काफी समय तक उनका सामना भी किया। धर्मयुद्ध (क्रूसेडस) कुछ हद तक सेलजुक्स शक्ति की

प्रतिक्रिया थी। तुर्क क्योंकि शायद देर से मुस्लिम बने, अरबों के मुकाबले में कम उदार थे और ईसाई यात्रियों की धार्मिक यात्रा में बाधा डालने लगे। क्रूसेडस के दूसरे कारणों में यूरोपीय शक्तियां जिम्मेवार थी। प्रथम क्रूसेड 1096-99 में हुआ। ईसाईयों की प्रथम सफलता की प्रतिक्रिया फलस्वरूप सेलजुक सेनापति ने मोसुल को जीत कर अपना केन्द्र बनाया और उत्तरी मेसोपोटामिया तथा सीरिया में नये राज्य की स्थापना की। सेलजुक तुर्को ने 1171 में मिश्र पर अधिकार कर लिया। लीवान्त के क्षेत्र पर मुसलमानों को फिर से विजय का नायक सुल्तान सालादीन था। सालादीन की पहली विजय जेरूसलम पर 1187 में पुन: विजय प्राप्त करना थी, जिसको वजह से तीसरा क्रूसेड (1189 से 92) में हुआ। सालादीन ने एक नये वंश की स्थापना की जिसने लीवान्त, मिश्र और लाल सागर के तट पर शासन किया। इस वंश की जगह तुर्की मेमेलुक्स ने ली जो कि सालादीन के महल के रक्षक थे।

योराप में तुर्की साम्राज्य "ओटोमन्स" साम्राज्य के नाम से जाना गया। ओटोमन्स कौन थे? "रम की सल्तनत" की समाप्ति के बाद यह तुर्को की एक शाखा थी जो कि एक राजनीतिक ईकाई के रूप में बने रहे।

विस्तार की प्रारम्भ की अवस्थाओं में, "ओटोमन्स" तुर्की गाजियों के सरदार बने और इस्लाम धर्म के लिए योद्धा जिन्होंने सिकुड़ते हुए बाइज़ेन्टाइन राज्य का पूरा लाभ उठाया। उस्मान प्रथम और उसके उत्तराधिकारी और औरन (1324-60) और मुराद (1360-89) के शासन काल में ओटोमन्स ने बाइज़ेन्टाइन के प्रदेशों पर अधिकार कर लिया जैसे सबसे पहले पश्चिमी अनतोलिया पर और उसके बाद दक्षिणी पूर्वी योरोप पर। वाइजिद (1389-1402) के काल में धन और शक्ति को पूरी तरह से पूर्व में अनतोलियाई तुर्की में एकत्रित कर लिया गया। ओरॅन ने 1324 में "बुरशा" पर अधिकार कर लिया।

इस अधिकार से तुर्को की शासकीय, आर्थिक और सैनिक शक्ति का विकास हुआ। 1354 से ओरॅन के पुत्र सिलेमन ने गेलीपोली को यूरोप के मोर्चे पर अपना केन्द्र बनाया जिससे कि वह योराप की ओर बढ़ सके। ओरॅन के पुत्र मुराद प्रथम के समय में गेलीपोलो का स्थायी विजयों के लिए प्रयोग किया गया। इस समय कुसतुनतुनिया इसलिए बचा रहा क्योंकि इसकी दीवारें मोटी थी और इसकी सुरक्षात्मक प्रणाली अच्छी थी, यद्यपि इसकी सुरक्षा करने वाले कमजोर और असंगठित थे और दूसरे ओटोमन सेना अभी पूर्ण विकसित न थी।

मुराद की आरम्भिक विजय उत्तर में थ्रेस की तरफ थी जिससे 1361 में इड्रीनोपल पर अधिकार संभव हो सका। मुराद ने योरोप में आश्रित राज्यों का निर्माण किया। उसने प्रदेशिय शासकों को बनाये रखा जिन्होंने इसके बदले में उसको सार्वभेमिकता स्वीकार की, उसे वार्षिक कर दिया और समय पड़ने पर सैना भी दी। इससे ओटोमन्स विजित प्रदेशों पर बिना किसी शासकीय प्रणाली के शासन करने में सफल हुये और न उन्हें सैनिक छावनी की व्यवस्था करनी पड़ी। 1390 के अन्त तक बाइजेइद ने पूरे पश्चिमी अनातोलिया पर अधिकार कर लिया। इससे योरोप आतंकित हो गया और डेनबू नदी के दक्षिण में ओटोमन शासन निश्चित हो गया तथा मुस्लिम दुनिया में वाजिद की प्रतिष्ठा इतनी बढ़ गई कि काहिरा के खलिफा ने उसे सुल्तान की पदवी प्रदान की।

खलीफा के मेमुलिक स्वामियों ने, जो कि मिश्र, सीरिया और धार्मिक स्थानों के शासक थे, इसका विरोध भी किया क्योंकि वह चाहते थे कि सुल्तान का पद केवल उन्हें ही प्राप्त हो। इसी काल में तैमूर मध्य एशिया में शक्तिशाली तुर्की साम्राज्य की स्थापना कर रहा था तथा ईरान, अफगानिस्तान और मेसोपोटामिया पर अधिकार करने के साथ, उसने 1398 में भारत पर भी आक्रमण किया। तैमूर को डर था उसके राज्य के पश्चिम में "ओटोमन" की शक्ति उसके विस्तार को रोक सकती है। वाइजिद को 1402 में तैमूर ने अनकारा के युद्ध में पराजित किया। यही नहीं वह बन्दी बना लिया गया और एक ही वर्ष में उसकी मृत्यु हो गयी।

मैमूर तथा मुराद द्वितीय के समय में (1421-51) ओटोमन राज्य के विस्तार का नया युग शुरू हुआ। 1422-23 में मुराद ने बाल्कान विरोध का दमन किया और कुसतुनतुनिया को घेर लिया और यह घेरा तभी हटा जब कि बाइज़ेन्टाइन ने उसे कर के रूप में अपार धन दिया। इसके पश्चात् उसने अनातोलिया में ओटोमन शासन को स्थापित किया। इसके पश्चात् मुराद ने 1423-30 में वेनिस के विरूद्ध प्रथम ओटोमन युद्ध का श्री गणेश किया। वेनिस अभी तक सुल्तानों के साथ मैत्रीपूण संबन्ध रखे हुऐ था क्योंकि वह ओटोमन प्रदेशों में व्यापारिक सम्बन्ध बनाये रखना चाहता था। और साथ ही वह काले सागर से भी सम्बन्ध बनाये रखना चाहता था।

मुराद को तुर्क सरदारों ने गद्दी पर बिठाया था। इन तुर्क सरदारों की शक्ति को सीमित करने के लिए योरोप और अनातोलिया में एक व्यवस्था की आवश्यकता थी। इसके लिए उसने अपनी सेना में बहुत से तुर्की समुदायों को स्थान दिया। इन समुदायों में अधिकतर ईसाई गुलाम तथा इस्लाम धर्म में प्रवेश पाने वाले होते थे। इस प्रकार से बनी नई सेना जाननेसरी (Jannisary) सेना कहलाती थी। इस सेना को शक्तिशाली बनाने के लिए मुराद ने अपने विजित प्रदेशों को इसके सदस्यों में बांटा। यही नहीं बाल्कान प्रदेशों से ईसाई युवकों को इस्लाम धर्म में लेकर उन्हें सुल्तान की जीवन पर्यन्त सेना में लिया गया।

1444 में टर्की ने वारना में विजय प्राप्त की जिससे योरोप का क्रूसेड युद्ध समाप्ति की ओर अग्रसर हुआ। जिस समय 1451 में मुराद की मृत्यु हुई, डानूब सीमा पर टर्की सफल हो चुके थे। और ऐसा लगता था कि ओटोमन साम्राज्य योरोप में बना रहेगा। सुल्तान मेमूद द्वितीय के शासन काल 1451-81 में ओटोमन साम्राज्य नई विजयों का पूर्ण लाभ उठाकर शक्तिशाली बनना चाहता था। बारना की विजय के बाद उनका पहला लक्ष्य था कुसतुनतनिया। मेमूद तथा उसके समर्थकों की नजर में ओटोमन साम्राज्य अपनी पूर्णता को तभी प्राप्त कर सकता था जबकि वह शासन और संस्कृति के केन्द्र कुस्तुनतुनिया पर अधिकार कर ले।

1453 में कुस्तुनतुनिया का घेरा और उस पर अधिकार ओटोमन साम्राज्य की एक महान उपलब्धि थी। कुस्तुनतुनिया को ओटोमन साम्राज्य की नई राजधानी इस्तानबुल में बदला गया। इस विजय से मेमूद द्वितीय मुस्लिम दुनिया का सबसे प्रसिद्ध शासक बन गया, यद्यपि पुराने खलीफा का राज्य अभी भी मिश्र के मेमुलिक्स और ईरान में तैमूर के उत्तराधिकारियों के हाथ में था। कुस्तुनतुनिया पर अधिकार करने के बाद मेमूद न केवल इस्लाम और तुर्कों का स्वामी बनना चाहता था बल्कि वह ईसाई दुनिया पर भी अधिकार करना चाहता था। इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए मेमूद द्वितीय ने सत्ता के कई आधारों का विकास किया।

आंतरिक रूप से उसका मुख्य उद्देश्य था "इस्तानबुल" को राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक केन्द्र में बदलना। इसके लिए उसने उस नगर की आबादी बढ़ायी। आबादी बढ़ाने के लिए इस नगर के नागरिकों के अलावा साम्राज्य के अन्य तत्वों को मिलाया गया जिससे वह सब आपस में एकमय हो सके। इस प्रयास से उसका साम्राज्य एक पूर्ण ईकाई में बदल सका। राजधानी में रहने के लिए नागरिकों की सुविधा में विकास किया गया। उनको करों की छुट दी गई। जिससे कारीगर और बुद्धिजीवी वर्ग पनप सके। मुख्य धार्मिक समुदायों को अपने नेताओं की देख-रेख में संगठित होने का अवसर प्रदान किया गया। इन धार्मिक समुदायों को सुल्तान की देख-रेख में अपने कानून, रिवाज, और भाषा विकसित करने के अवसर भी प्रदान किये।

"इस्तानबुल" के व्यापार और उद्योगों के विकास का विशेष प्रयन्त किया गया। इससे यूरोप से व्यापारियों और कारीगरों को सुविधायें प्रदान करके आमंत्रित किया गया। मेमूद ने अपना अधिक समय यूरोप तथा एशिया में अपने साम्राज्य के विकास के लिया लगाया जिससे उसे विश्व नेतृत्व प्राप्त हो सके। उसने वास्तव में अनातोलिया और दक्षिणी पूर्व यूरोप में ओटोमन शासन की आधार शिला स्थापित की जो कि अगली चार शताब्दियों तक बनी रही।

एक बड़े साम्राज्य को जीतने के साथ-साथ मेमूद ने उसको संगठित भी किया। सगंठन के साथ उसने उन शासकीय, धार्मिक और कानूनी संस्थाओं को एक निश्चित रूप दिया और उन्हें कानून के रूप में कानून नामा के नाम से मान्यता दी। इस प्रकार की संस्थायें पिछली शताब्दी से चली आ रही थी। यह सब प्रक्रिया 16 वीं शताब्दी के मध्य काल तक पूरी हुई।

यह पूर्ण रूप से नहीं कहा जा सकता कि मेमूद अपने साम्राज्य की आर्थिक और सामाजिक संस्थाओं को स्थापित करने में पूर्णतया सफल हुआ। मेमूद एक समुदाय को दूसरे समुदाय के साथ भिड़ा कर अपनी सस्ता और शक्ति को बनाये रखने में सफल रहा और इस तरह से विजय यात्रा रखी। 1459 में सर्विया पर आक्रमण किया गया।

इसी वर्ष तुर्को ने पेलोपोनिस (युनानी क्षेत्र) पर अधिकार कर लिया। दो वर्ष के बाद उन्होंने बोशिना और हरजोगोविना पर भी अधिकार कर लिया। अगला कदम अलबानिया पर था। 1480 में उन्होंने इटली के बन्दरगाह ओटरेन्टो पर अपना अधिकार स्थापित किया। 1517 में सीरिया और मिश्र पर अधिकार कर लिया गया। 1526 में उन्होंने हंगरी के शासक की सेना को ध्वस्थ कर दिया। इस हार को आज भी हंगरी के इतिहास में काले दिन के रूप में याद किया जाता है। तीन वर्ष बाद उन्होंने वियाना को घेर लिया। 1571 में साइप्रस भी उनके अधिकार में आ गया। इस समय तक ओटोमन टुर्की राज्य योरोप के कई भागों में सशक्त रूप में स्थापित हो चुके थे।

4.3 टर्की की सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था

4.3.1 समाज का स्वरूप:

ओटोमन राज्य पहले कबीले नेता थे जो बाद में सेल्जुक के नेतृत्व में सीमाओं पर राजकुमार और गाजी नेता बन गये। यह प्रक्रिया 13 वीं और 14 वीं शताब्दी में चलती रही। बरसा पर अधिकार करने के बाद "ओरॅन" ने अपने आप को अपने सार्वभोम शासकों से अलग

स्वतन्त्र घोषित कर दिया और बेग की उपाधि धारण की जो कि उसके उत्तराधिकारी भी अपनाते रहे। जब तक कि बाइजिद प्रथम को सुल्तान की उपाधि मिली। यह उपाधि उसे ईसाई धर्म-योद्धा अर्थात क्रुसेडरस को निकोपाली 1396 में हराने के उपलक्ष में काहिरा के अबासिद खलीफा ने प्रदान की। इस काल तक आते-आते खलीफा अब केवल अपनी शक्ति की प्रतिछाया रह गया था।

जहां तुर्की कबीले के कानून और रिवाज प्रचलित थे, वहां मुस्लिम कानून का कोई प्रभाव नहीं था। ओटोमन सरदार विजित प्रदेशों से कर वसूल करते थे और इन्हें यह अधिकार था कि वह अपनी अधिकृत भूमि से कर वसूल कर सके। बेग अन्य सरदारों की तुलना में एक ही लाभ उठा सकता था। कबीले का नेता होने के नाते उसे पेनिक का अधिकार दिया गया। इस अधिकर के अनुसार वह अन्य सरदारो की तुलना में कर का पांचवा हिस्सा अधिक वसूल करता था। क्योंकि बेग अपनी शक्ति और वित्त के लिए अपने सरदारों पर निर्भर करता था, इसलिए उसकी शक्ति सीमित थी।

विकसित होता हुआ ओटोमन राज्य तुर्की साम्राज्य के कबीले रिवाजों से प्रभावित था जो कि मध्य एशिया में पनप थे। विशेष कर यह रिवाज सैनिक संगठन और सैनिक प्रणाली में अपनाये गये। ओटोमन राज्य महान मुस्लिम सभ्यता के सिद्धान्तों से भी प्रभावित हुआ जो कि अब्बासिद्ध काल में पनपे और जो सेल्जुक तुर्कों के माध्यम से ओटोमन साम्राज्य को प्राप्त हुए विशेषतोर से कट्टर इस्लाम के सिद्धान्तों को शासन, धर्म, कानून और शिक्षा के क्षेत्र में अपनाया गया।

जहां तक शाही दरबार, केन्द्रीय आर्थिक ढ़ाचे और कर तथा शासकीय व्यवस्था का प्रश्न था, ओटोमन शासक बाइज़ेन्टाइन सभ्यता से प्रभावित हुए, कुछ हद तक सर्बिया और बल्गेरिया साम्राज्य से वह प्रभावित हुए 14 वीं शताब्दी में ईसाई प्रभाव का कारण था ओटोमन और ईसाई राजकीय दरबारी के मैत्रीपूर्ण सम्बन्ध। यूनानी और सर्बियन भाषाओं ने ओटोमन राजकीय दरबार के जीवन को प्रभावित किया और कुछ हद तक शासन व्यवस्था को भी प्रभावित किया।

4.3.2 सामाजिक वर्गीकरण:

ओटोमन साम्राज्य में मध्य काल में समाज तथा सरकार में जो संस्थायें स्थापित हुई वह आधुनिक काल तक बनी रही। ओटोमन समाज में दो स्पष्ट विभाजन थे-1- शासक वर्ग जिसमें कम संख्या में शासकीय समुदाय आता था, 2- शासित वर्ग जिसमें अधिकांश समाज का वर्ग शामिल था। ओटोमन शासक वर्ग के लिए तीन शती का होना आवश्यक था। - सुल्तान तथा उसके राज्य के प्रति वफादारी 2- मुस्लिम धर्म को मानना तथा मुस्लिम धर्म, व्यवस्था तथा विचारधारा को जीवन में अपनाना 3- ओटोमन रीति-रिवाजों, प्रणाली तथा भाषा को जानना जो कि काफी पेचीदा थे। जिस वर्ग के पास यह गुण नहीं थे उन्हें शासित वर्ग में माना जाता था जिसे "रियाया" कहा जाता था। जो कि सुल्तान के संरक्षण में रहती थी। ओटोमन शासक वर्ग के सदस्य सुल्तान के गुलाम समझे जाते थे और इस तरह से वह अपने स्वामी के सामाजिक स्तर में आ जाते थे। गुलाम की हेसियत से, उनकी सम्पति तथा उनका जीवन सुल्तान पर निर्भर करता था। और वह उनके साथ जैसा व्यवहार चाहता था कर सकता था।

उनका आधारभूत कार्य था कि वह राज्य के इस्लामी स्वरूप को कायम रखे और साम्राज्य का शासन तथा सुरक्षा करें। रियाया का मुख्य कार्य था कि वह राज्य के लिए धन संचित कर सके जिसके लिये वह खेती करे या व्यापार और उद्योग धन्धे करे। इस आय का एक भाग वह शासक वर्ग को कर के रूप मे दे।

शासित वर्ग में वर्ग विभाजन धर्म पर निर्भर करता था। प्रत्येक महत्वपूर्ण वर्ग अपने आप को एक स्वतन्त्र केन्द्रीय ईकाई में संगठित करता था जिसे मिल्लत कहते थे। प्रत्येक मिल्लत का अपना कानून और अपना आन्तरिक ढ़ाचा होता था। जिसका निर्देशन एक धार्मिक नेता के द्वारा किया जाता था जो कि सुल्तान के प्रति जिम्मेवार होता था। मिल्लत् के सदस्यों के कर्तव्यों और जिम्मेदारियों के लिये भी वह सुल्तान को आश्वत करता था, विशेष तौर में करों की वसूली और राज्य की सुरक्षा के लिए। इसके अतिरिक्त प्रत्येक मिल्लत को बहुत से सामाजिक शासकीय कार्य करने पडते थे जो कि ओटोमन राज्य नहीं करता था। इन कार्यों में विवाह, तलाक, जन्म, मृत्यु, स्वास्थ्य, शिक्षा, आन्तरिक सुरक्षा और न्याय सम्मिलित थे। मिल्लत व्यवस्था 500 वर्षों तक सफलता पूर्वक चलती रही। इसके द्वारा साम्राज्य के भिन्न समुदायों को अलग रखा गया और उनमें कोई संघर्ष नहीं हुआ जिससे सामाजिक ढांचा सुरक्षित बना रहा और जबकि ओटोमन राज्य में कई समुदायों के लोग रहते थे।

तुर्को के ओटोमन राज्य को केन्द्रीय रूप सुल्तान प्रदान करता था। सुल्तान ही सारी व्यवस्था का आधार था। शासक तथा शासित वर्ग उसके प्रति वफादार थे।

4.3.3 कानून व्यवस्था:

ओटोमन समाज के संगठन और कार्य के लिए दो प्रकार की कानूनी व्यवस्था प्रचलित थी। एक थी 'शरियत' अर्थात धार्मिक कानून और दूसरी थी 'कानून' या सिविल कानून। शरियत जो कि ओटोमन राज्य का आधार भूत कानून था, राज्य के राजनीतिक सामाजिक तथा नैतिक संस्थाओं और मान्यताओं को प्रभावित करता था और मुस्लिम रियाया के जीवन के सभी पहलूओं को नियन्त्रित करता था।

फिर भी सुल्तान को यह स्वतंन्त्रता थी कि वह ओटोमन समाज में समय के अनुसार परिवर्तन ला सके। वह समाज की संस्थाओं और रीति रिवाजों में भी समय के अनुसार परिवर्तन ला सकता था। यही कारण था कि ओटोमन साम्राज्य लम्बे समय तक बना रहा और यहां तक कि इसके पतन के समय भी इसी गुण के कारण कायम रहा।

औटोमन सुल्तान कभी भी इतने निरंकुश नहीं थे जैसी की आम धारणा है। यह केवल 19 वीं शताब्दी में संभव हुआ कि ओटोमन सुधारकों ने सरकार तथा समाज का केन्द्रीयकरण किया और पहले से चली आ रही स्वायत् संस्थाओं को समाप्त किया जिनकी वजह से पिछली शताब्दीयों में विकेन्द्रीयकरण रहा था।

4.3.4 मुख्य तत्कालीन संस्थाऐ:

टर्की के सामाजिक तथा आर्थिक जीवन को मध्य काल में समझने के लिए उपरोक्त वर्णन के अतिरिक्त उस समय की कुछ अन्य संस्थाओं को जानना भी जरूरी है।

इन संस्थाओं में सर्वप्रथम हम सुल्तान का ग्रह विभाग लेते हैं। यह विभाग सुल्तान के व्यक्तिगत और आवश्यकताओं को पूरा करने के अतिरिक्त और बहुत से कार्य भी करता था। इसमें केन्द्रीय शासन के अफसर, प्रान्तीय शासन के आला अफसर तथा केन्द्र की सेना अफसर शामिल थे।

इस सैनिक अफसरों को "जानेसारी" कहा जाता था। कभी-कभी इन सैनिक अफसरों को पोर्ट का "सिपाही" भी कहा जाता था। इस विभाग के सभी अधिकारियों को "गुलाम" का पद दिया जाता था। "गुलाम" शब्द का अर्थ होता था "सुल्तान का आदमी" न कि वह गुलाम जो कि निम्न श्रेणी का प्रतीक माना जाता है। "गुलाम" का अर्थ उस समय राज्य में आदर और अधिकारपूर्ण व्यक्ति माना जाता था।

गृह विभाग में एक आधारभूत सिद्धान्त अपनाया जाता था कि सुल्तान के गुलाम के पद पर मुस्लिम (तुर्की) रियाया को नहीं लिया जाता था। सुल्तान की मूल मुस्लिम रियाया को साम्राज्य के इस्लाम धर्म कानून और शैक्षणिक संस्थाओं पर एक मात्र नियन्त्रण दिया जाता था। परन्तु गृह विभाग में प्रवेश के लिए गैर मुस्लिम और गैर तुर्की होना जरूरी होता था। सुल्तान को इस प्रकार भर्ती के लिए बहुत से स्त्रोत उपलब्ध थे जैसे युद्ध के बन्दी जो कि ईसाईयों के विरूद्ध युद्ध में प्राप्त होते थे। तोफे के तोर में प्राप्त बन्दी या खरीदे हुये बन्दी या ईसाईयों से प्राप्त बच्चे जिन्हें "देवशिर में" कहा जाता था। इन स्त्रोत से प्राप्त भर्ती किये गये लोग इस्लाम को कबूल करते थे। इस्लाम कबूल करने के लिए उन पर दबाव डालने के ही तरीके प्रयोग नहीं किये जाते थे। वह स्वयं अपनी मरजी से भी सुल्तान की सेवा में चले जाते थे जिससे वह तरक्की कर सके भर्ती किये गये गुलामो में सबसे गुणवान लोगों को महल के स्कूलों में भंजा जाता था जहां पर उन्हें इस्लाम धर्म की दीक्षा दी जाती थी तथा उसके साथ-साथ युद्ध, राजनीति और शासन प्रबन्ध में प्रशिक्षण दिया जाता था। लम्बे प्रशिक्षण के बाद जब वह पूर्ण यौवन अवस्था को पहुंचते थे, उनमें सबसे गुणवान को प्रान्तो का गर्वनर नियुक्त किया जाता था जिन्हें सनजक-बेगी कहा जाता था। इनमें से कुछ, समय के साथ, गर्वनर जनरल बन जाते थे जिन्हें बेगलर-बेगी कहा जाता था, जो कि बहुत से सनजक के ऊपर शासन करते थे, और इससे भी आगे यदि किस्मत ने साथ दिया वह वजीर के पद पर पहुंच जाते थे जो कि दिवान का सदस्य होता था। यह साम्राज्य के महत्वपूर्ण कार्यो को देखते थे। राज्य का सबसे बड़ा पद-वजीर भी उनकी पहुंच में आ सकता था।

महल के स्कूलों, में प्रशिक्षण प्राप्त करने वालों में कुछ ही भर्ती किये गये लोग उच्चतम पद तक पहुंच पाते थे। इन भर्ती किये गये अधिकारियों में अधिकतर न्यायालय, राज्य दरबार, केन्द्रीय प्रशासन और गृह विभाग की सेना तक ही पहुंच पाते थे।

जो युद्ध के बन्दी तथा देवीशरमें बच्चे महल के स्कूलों में प्रवेश नहीं पाते थे उन्हें राज्य के अन्य प्रदेशो में प्रशिक्षण दिया जाता था। अधिकतर इनको प्रशिक्षण एशिया माइनर में दिया जाता था। कड़े प्रशिक्षण के पश्चात इन्हें "जानेसरीस" का सदस्य बना दिया जाता था।

इस व्यवस्था की दो महत्वपूर्ण विशेषतायें थी 1- गुलाम का पद वंशानुगत नहीं था, अपितु उन बच्चों को जो कि शाही गृह विभाग के अधिकारियों के होते थे, उन्हें इस व्यवस्था से

अलग करके साम्राज्य के मुस्लिम समुदाय के साथ मिला दिया जाता था। 2- दूसरे गुलामों के कुछ अपवादों को छोड़कर निश्चत वेतन दिया जाता था। उन्हें भूमि या राज्य का कोई भाग नहीं दिया जाता था।

सुल्तान के अधिकार में गृह विभाग की सेना के अतिरिक्त और बहु त से यौद्धा वर्ग के लोग आते थे। यह घुड़सवार सुल्तान के बुलाने पर युद्ध में शामिल होते थे। सफल सैनिक बनाने के लिए उन्हें उनकी सेवा के बदले में जागीर दी जाती थी। इस जागीर को दो भागों से जाना जाता था। एक को "किलिज" या "तलवार" कहते थे और दूसरे को "तरक्की" कहा जाता था। सिपाही के रख-रखाव के लिए किलिज दी जाती थी जब कि तरक्की उसे उसकी लम्बी और विशेष सेवाओं के लिए दी जाती थी। हर सिपाही को अपने युद्ध के हथियार और युद्ध का सामान स्वयं रखना पड़ता था जैसे हथियार, तम्बू माल ढ़ोने वाले जानवर आदि। सिपाही का अपनी भूमि पर पूर्ण अधिकार नहीं होता था। कानून की नजर में उसकी भूमि राज्य की भूमि होती थी।

यह स्पष्ट था कि युद्ध, राजनीति, और शासन के क्षेत्र में ओटोमन राज्य में काफी शक्ति और विशेषाधिकार "गुलाम" या "गिलमन" के हाथ में थे इन्हें सुल्तान के आदमी कहा जाता था।

4.4 आर्थिक व्यवस्था:

ओटोमन साम्राज्य का आर्थिक क्षेत्र में आधार चांदी का सिक्का होता था। राज्य की आय और व्यय इस सिक्के में ही आंकी जाती थी। अन्य यूरोप के राष्ट्रों के तरह ओटोमन शासकों ने भी सोने और चांदी की कमी को महसूस किया। बाद के दिनों में यह कभी इतनी बढ़ी कि चांदी पर आधारित अर्थ व्यवस्था को खतरा पैदा हो गया। इस संकट का सामना करने के लिए सुल्तान ने चांदी की खानों को अपने नियंत्रण में ले लिया तथा सिक्के के आयात को प्रेरित किया और निर्यात पर रोक लगाई। राज्य के उन आर्थिक कार्यों को बढ़ावा दिया गया जिनमें नकद की जगह काइडं की आवश्यकता पड़ती थी।

बाद में टर्की को इन सुधारों के कारण मुद्रा स्फिति का सामना करना पड़ा। इस समय दामों की क्रान्ति का कारण अमरीका की चांदी समझी जाती थी जो यूरोप के राष्ट्रो को प्रभावित कर रही थी। चांदी की अधिक मात्रा में उपलब्धि के कारण मुद्रास्पीथी बढ़ी। चांदी अमरीका से स्पेन और वहां से जनेवा होती हु ई ओटोमन साम्राज्य में पहु ंच गई। जैसे जैसे चांदी अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार के माध्यम से पूर्व की ओर बहने लगी, चांदी की बाढ़ के कारण हर राष्ट्र में सिक्के का अवमुल्यन हु आ।

इस चांदी की वृद्धि के साथ आबादी की बढ़ोतरी भी आर्थिक समस्या का एक मुख्य कारण था। ओटोमन साम्राज्य की आबादी लगातार बढ़ रही थी विशेष रूप से एशिया माइनर में। ओटोमन साम्राज्य के उन सब वर्गों पर मुद्रास्पीथी का असर हो रहा था जिनकी आमदनी निश्चित थी।

राज्य के शासकीय और धार्मिक सेवाओं में कार्य करने वाले अधिकारी तथा कर्मचारी, अपनी निश्चत आय से असंतुष्ट होकर भ्रष्टाचार का सहारा लेने लगे। शाही गृह विभाग के सैनिकों में भी बेचेनी फैल गई। दामों की क्रान्ति ने सिपाही को भी प्रभावित किया। किसान भी

इससे प्रभावित हुए वह अपने खेत छोडकर भाग रहे थे। साम्राज्य की आबादी बढ़ने के साथ खेती की भूमि पर उसका दबाव पड़ा। इससे एक ऐसा समुदाय पैदा हुआ जो कि खेती की भूमि से हट गया। इनमें से कुछ नगरों की ओर चले गये।

टर्की का मध्यकालीन इतिहास आधुनिक इतिहास के विद्यार्थी के लिए आश्चर्य और प्रेरणा का विषय है। ओटोमन साम्राज्य ने 600 वर्षों की शानदार मंजिल तय की। यह साम्राज्य सुलेमान शानदार 1520-66 के समय में अपनी सत्ता और शासन की चरम सीमा पर था। इसका अंत केवल 1922 में हुआ जब टर्की को गणतंत्र घोषित किया गया। ओटोमन साम्राज्य जो अनातोलिया में केन्द्रीत था, अपने ऐतिहासिक विकास में अपने विस्तार में बदलता रहा। अपनी चरम सीमा पर इस साम्राज्य में आधुनिक अल्बानिया, युनान, बल्गेरिया, युगोस्लाविया, रोमानिया, हंगरी और रूस के कुछ भाग ईराक सीरिया, पेलिस्टाइन, मिश्र, अलजीरिया और अरब दुनिया के कुछ क्षेत्र सम्मिलित थे।

4.5 सारांश

मध्यकालीन युग को आधुनिक इतिहास की आधारशिला कह सकते हैं। इसी युग में बाइज़ेनटाइन सभ्यता का विकास हुआ और पूर्व की सभ्यता पश्चिम की तरफ गई। जहाँ उसे एक नया जीवन मिला जो कि पुनजार्गरण काल में पुष्पित हुआ। हमारा धर्म, दर्शन, शिक्षा, विज्ञान, भाषा, कला और शासन- यह सब मध्यकालीन युग से पैदा हुए जिसमें एक लम्बी विकास की प्रक्रिया थी।

दसवीं शताब्दी में अनिश्चतता का वातावरण था। इस समय मध्य एशिया के तुर्कों ने मुस्लिम सभ्यता को एक नया जीवन प्रदान किया। यह 'तुर्क' अरब सभ्यता के सम्पर्क में आये। जिस समय अरब सभ्यता शान्ति की कलाओं का विकास कर रही थी, तुर्क इस्लाम की शक्ति विकास कर रहे थे। इन तुर्क कबीलों में "सेलजुक्स" सबसे महत्वपूर्ण थे। सेलजुक्स तुर्कों ने कई तरह से महत्वपूर्ण ऐतिहासिक भूमिका निभाई। उन्होंने एशिया माइनर को ईसाई धर्म से इस्लाम में परिवर्तित किया। यूरोप में तुर्क "ओटोमन्स" कहलाये। ओटोमन्स तुर्कों में "मुराद" नाम के शासक ने यूरोप में आश्रित राज्यों का निर्माण किया। 1453 में कुसतुनतुकिया पर अधिकार ओटोमन साम्राज्य की एक महान उपलब्धि थी।

ओटोमन साम्राज्य में मध्यकाल में समाज तथा सरकार में जो संस्थायें स्थापित हुई वह आधुनिक काल तक बनी रही। सुल्तान, शासक वर्ग तथा रियाया समाज के महत्वपूर्ण अंग थे। ओटोमन राज्य का केन्द्रीय जोड़ने वाला बिन्दू सुल्तान था। ओटोमन साम्राज्य का आर्थिक क्षेत्र में चांदी का सिक्का उजागार था। इस साम्राज्य का अन्त 1922 ई0 में हुआ, और ततपश्चात् कमाल अतातुर्क, जिन्हें मुस्तफा कमाल पाशा के नाम से भी जाना जाता है, ने एक आधुनिक तुर्की राष्ट्र का निर्माण कार्य आरम्भ किया।

4.6 अभ्यास कार्य-

(1) मुस्लिम सभ्यता को तुर्कों की क्या देन थी? यह अरबों से किस प्रकार भिन्न थी?

(2) यूरोप में "ओटोमन्स" तुर्कों ने अपने साम्राज्य का कैसे विकास किया? विस्तार की इस प्रक्रिया का वर्णन कीजिये।

(3) मध्यकाल में "ओटोमन्स" साम्राज्य की सामाजिक संस्थाओं का वर्णन करते हुए बताइये कि सुल्तान का उसमें क्या स्थान था?

(4) ओटोमन्स साम्राज्य के आर्थिक ढ़ाचे का वर्णन कीजिये।

4.7 संदर्भ ग्रन्थ:

(1) A History of World Civilization : J.E. Swain

(2) History of the World : J.M. Robeirts, (Pelican Publication)

(3) Western Civilizations : Edward Burns.

(4) विश्व का इतिहास नैथेनीडयल प्लैट

(5) The Age of Reason begins : Will and Ariel Durant

(6) The New Cambridge Modern History Vol. III: Edited by R.B. Wernhams

(7) Short History of Saracens : Ameer Ali (Macmillan Publication)

(8) Notes on European History Vol. II : Edwards.

इकाई - 5

मध्यकालीन समाज का पतन की रूपरेखा

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 सामन्तवाद में संकट

5.3 वाणिज्य एवं व्यापार का पुनरूत्थान

5.4 जहाज निर्माण एवं नौपरिवहन में तकनीकी विकास

5.5 मुद्रा एवं लेन-देन का विकास

5.6 शहरों का उद्भव

5.7 मध्यम वर्ग का उदय

5.8 किसान विद्रोह

5.9 राष्ट्र-राज्यों का उत्थान

5.10 बारूद का प्रयोग

5.11 केन्द्रीय शक्ति की स्थापना

5.12 सारांश

5.13 अभ्यासार्थ प्रश्न

5.14 सन्दर्भ ग्रन्थ

5.0 उद्देश्य:

इस यूनिट में हमारा उद्देश्य यह है कि आपको संक्षेप में इससे अवगत कराया जाय कि यूरोप मे मध्यकालीन समाज के पतन की शुरूआत कैसे हुई एवं नये समाज का उदय क्या संदेश लेकर आया। आपका इस बात से भी परिचय कराना है कि नवीन समाज का जन्म पुराने समाज की कोख से होता है इसलिए स्वभावत: एक के पतन का इतिहास दूसरे के उत्थान का इतिहास है। इस अध्याय में उन सब महत्वपूर्ण तत्वों का अध्ययन प्रस्तुत किया जाएगा जिनके कारण से यूरोपीय मध्यकालीन समाज का आधुनिक युग में रूपान्तरण सम्भव हो सका। इस यूनिट के अध्ययन के पश्चात् आप यह समझ सकेंगे कि-

- मध्यकालीन यूरोपीय समाज के पतन की प्रक्रिया कब और कैसे हुई?
- वे तत्व जो मध्यकालीन समाज के पतन के लिए उत्तरदायी थे।
- मध्यकालीन समाज में विकसित हो रही प्रवृत्तियां जो सामन्ती समाज की विरोधी थीं।
- नए समाज का उद्भव।

5.1 प्रस्तावना:

पांचवी शती में पश्चिमी यूरोप में जिन राज्यों की स्थापना की गई थी वे अभी भी अपने भूमध्य-सागरीय चरित्र को संजोए हुए थे। इस समुद्र के इर्द-गिर्द सम्पूर्ण प्राचीन सभ्यताएं

पनपीं एवं दूर-दूर तक अपने विचारों, एवं व्यापार को फैलाया। वास्तव में यह रोमन साम्राज्य का केन्द्र बन गया था। सातवीं शताब्दी के मध्य इस्लाम के आकस्मिक प्रवेश एवं उसकी विजयों ने सारी परिस्थितियों को परिवर्तित कर दिया। परिणामत: पश्चातवर्ती ऐतिहासिक धाराओं को उन्होंने गहराई से प्रभावित किया। भूमध्य सागर, जो अब तक पूर्व एवं पश्चिम में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा था, एक बाधा बन गया था। आठवीं शताब्दी के प्रारम्भ से ही यूरोपीय व्यापार का पतन प्रारम्भ हो गया था एवं सम्पूर्ण आर्थिक परिघटनाओं ने बगदाद की ओर, मुंह मोड़ लिया था।

आठवीं शती के ऐतिहासिक दौर में व्यापार की रूकावट के कारण सम्पूर्ण गतिविधियों में एक ठहराव आया। परिणामत: व्यापारियों की संख्या पर इसका दुष्प्रभाव पड़ा। मुद्रा संकुचन एवं शहरी जीवन में बिखराव आया।

यह स्पष्ट है कि आठवीं सदी के अन्त तक पश्चिमी यूरोप में ग्रामीणीकरण की प्रक्रिया पूर्ण हो गई। कृषि मुख्य व्यवसाय बन गई एवं व्यक्ति की सम्पदा का मानदण्ड सिर्फ भूमि रह गई। सम्राट से लेकर अर्ध-दास तक सभी वर्ग प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष तौर पर भूमि पर निर्भर करने लगे। चल सम्पत्ति की अब आर्थिक जीवन में भूमिका समाप्त हो गई एवं भूमि सामाजिक प्रतिष्ठा का प्रतीक बन गई।

अब सेना का संगठन एवं सैनिकों की भर्ती जागीरों के धारकों द्वारा की जाने लगी। भू-स्वामी नाईट्स को रखते थे जो कि शस्त्रधारी होते थे। इसकी वजह से राजा की प्रभुसत्ता खतरे में पड़ गई। सामन्तवादी प्रवृत्तियों का वर्चस्व स्थापित होने लगा। प्रत्येक भू-स्वामी ने अपनी स्वतन्त्रता का दावा करना प्रारम्भ कर दिया एवं सत्ता का पूर्णत: विकेन्द्रीकरण हो गया।

नवीं शती से सम्पूर्ण पश्चिमी ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था अपने ही भीतर बन्द होकर सिकुड़ गई। वस्तुओं का विनिमय एवं आवागमन बिल्कुल ठप्प होकर रह गया। इतिहासकारों ने इन परिस्थितियों को 'बन्द ग्रामीण अर्थव्यवस्था' ' की संज्ञा दी है।

मध्यकालीन समाज में चर्च की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। यह एक ऐसी संस्था थी जिसका प्रभाव सम्पूर्ण ईसाई संसार पर था। इसकी जड़े प्राचीन एवं मजबूत थीं। यह एक धार्मिक युग था इसलिए चर्च भी एक पारलौकिक शक्ति थी लेकिन इसके अतिरिक्त उसकी जबरदस्त भौतिक शक्ति भी थी। उसके पास न केवल विशाल सम्पदा थी, बल्कि वह एक बड़ा भू-स्वामी भी था। इस तरह चर्च न केवल इस युग का एक महान नैतिक अधिकारी था बल्कि वह एक महान आर्थिक शक्ति भी था।

धीरे-धीरे सामन्ती युग गुजर गया। इसकी विशिष्टताएं इतिहास में खो गई एवं पुरानी संस्थाओं के पतन की शुरूआत हो गई। सामन्तवाद अपना वर्चस्व खोने लगा। धर्म युद्धों का अन्त हो गया। तेरहवीं सदी के मध्य तक ऐसा बहुत कम शेष रह गया था जो मध्ययुगीन था। यह परिवर्तन आकस्मिक नहीं था। इतिहास के अधिकांश कालों में संस्थाओं का उत्थान एवं पतन साथ-साथ ही होता है। यह युग भी इसका अपवाद नहीं था। मध्य तेरहवीं शताब्दी के पश्चात् आने वाले एक सौ सालों तक, जैसे-जैसे पन्द्रहवीं सदी प्रगति कर रही थी, पुरानी संस्थाएं अपना महत्व खोती जा रही थीं। यूरोपीय समाज में व्यापार, उद्योग, बैंकिंग एवं उधार-

व्यवस्था का आर्थिक दृष्टि से कृषि पर वर्चस्व स्थापित होता जा रहा था। शहरी जीवन एवं मध्य वर्ग का प्रभाव निरन्तर बढ़ता जा रहा था। निम्न वर्ग की आतुरता लगातार बढ़ती जा रही थी एवं ग्रामीण क्षेत्रों में अर्ध-दासता का स्थान स्वतन्त्रता होती जा रही थी। राष्ट्रीय चेतना के चिह्न दृष्टिगोचर होने लगे एवं राज्यों की सीमाएं सुस्थापित होने लगी। नये राजतन्त्रों ने केन्द्रीय राजतन्त्र स्थापित करने के लिए इन परिस्थितियों का लाभ उठाया। इसी दौरान युद्ध कला में अत्यधिक विकास हुआ। चर्च निरन्तर शक्ति विहीन होते चले गए एवं अन्ततः वर्चस्व खो बैठे। नये ज्ञान एवं विचारों को अर्जित किया गया। पन्द्रहवीं सदी के मध्य के लगभग नए युग का सूत्रपात हुआ एवं अब यूरोप के इस नए मंच पर आधुनिक इतिहास का नाटक खेला जाने वाला था।

5.2 सामन्तवाद में संकट:

सामन्तवाद के पतन एवं नए समाज के उद्भव के बारे में मुख्यतः दो विचार प्रमुख हैं जो निम्न हैं :

सामन्ती संकट के बारे में एक तक यह है कि अरब आक्रमणों के पश्चात् उनका स्थान धर्मयुद्धों के रूप में ईसाई हमलों ने ले लिया। धर्मयुद्धों का एक बड़ा परिणाम यह हुआ कि पूर्व एवं पश्चिम के मध्य सम्बन्धों के रास्ते खुल गए। इसके साथ ही बायजेन्टाईन साम्राज्य का पतन हुआ एवं इटली का एक बड़े व्यापारिक केन्द्र के रूप में उत्थान हुआ। इटली ने धर्मयुद्धों में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। व्यापारिक सम्बन्धों की पुर्नस्थापना से यूरोप के स्वामियों में नई रूचियों का विकास हुआ एवं नई वस्तुओं में उनकी रूचि अधिक बढ़ गई जो कि सामान की अदला बदली के द्वारा नहीं मिल सकती थी। इसलिये मुद्रा सम्बन्धों की वापसी हुई। स्वामियों ने अपनी भूमि को (Deminse) को चरागाह भूमि में परिवर्तित करना प्रारम्भ कर दिया। स्वामी की भूमि (Deminse) एवं अर्धदास की भूमि (Villion) की भूमि के मध्य अन्तर समाप्त हो गया। श्रम किराये (Labour rent) का स्थान पहले अनाज एवं तत्पश्चात् नकद किराये (Cash rent) ने ले लिया। स्वामी भू-स्वामी बन गए एवं अर्धदास किरायेदार (Tenants)। स्वामी-अर्धदास सम्बन्ध भू-स्वामी-किरायेदार में परिवर्तित हो गए (हेनरी पीरेन)।

दूसरा तक ऐसे इतिहासकारों द्वारा प्रस्तुत किया गया है जो सामन्तवाद को जागीर (Fief) के बराबर मानते हैं। सामन्तवाद का पतन तो आवश्यक है क्योंकि जागीर व्यवस्था एक विशेष युद्ध व्यवस्था पर निर्भर करती है जिसका प्रचलन बारूद के व्यापक प्रयोग के कारण तेजी से समाप्त होता चला गया। मध्यकालीन यूरोप में युद्ध-व्यवस्था मुड़ सवार नाईट्स पर निर्भर करती थी। डूम्सडे बुक ने नाईट्स सेवा के मामले में अमीरों के सम्पूर्ण संसाधनों की गणना की थी लेकिन उससे जाहिर हुआ कि इस व्यवस्था का प्रचलन तेजी से समाप्त होता जा रहा था। यूरोप के मैदानों में शस्त्रों से सुसज्जित नाईट्स का जब मंगोलों से मुकाबला हुआ जब वे पूर्णतः पराजित हुए। तेरहवीं सदी के लगभग यूरोपीय युद्धों में नाईट्स स्पष्टतः अपर्याप्त थे। नाईट्स पर आधारित युद्ध व्यवस्था की कमजोरी को पन्द्रहवी शताब्दी में बारूद के प्रयोग द्वारा पूरा किया गया। वह युद्ध-व्यवस्था जिसे नाईट्स व्यवस्था का स्थान लेना था वह स्थाई बन्दूकचियों एवं तोपचियों पर निर्भर करती थी। चूकि तोपें एवं बारूद्ध अत्यधिक मंहगे थे इसलिए राजा को

मुद्रा की आवश्यकता थी न कि नाईट्स सेवाओं की। तोपों के प्रयोग एवं बारूद पर एकाधिकार ने राजाओं को स्वामियों के किलों एवं ठिकानों को नष्ट करने का अवसर प्रदान किया एवं उन्होंने उच्चतर स्तर पर केन्द्रीयकरण को कार्यान्वित किया। मुद्रा की आवश्यकता ने स्वामियों पर नये कर लगाने एवं नाईट्स सेवाओं के बदले नकद मांग को बढ़ावा दिया लेकिन दूसरी तरफ सामन्ती करों के लिए किसी प्रकार की अनुमति नहीं थी। इसलिए अगर "नये राजतन्त्र" की स्थापना होनी थी तब सामन्तवादी व्यवस्था को अगर आवश्यकता हो तो बलपूर्वक समाप्त करना ही था। जैसे ही राजा ने सेवा पर आधारित आर्थिक सम्बन्धों के लिए स्वामियों पर दबाव डालना प्रारम्भ किया जिनको अर्धदास से "टिनेन्ट्स एट विल" में परिवर्तित कर दिया। यह तर्क सामन्तवाद के पतन को विशुद्ध राजनैतिक एवं सैनिक दृष्टि से देखता है। वास्तव में एक ही समय में दोनों दृष्टिकोणों से परिस्थितियों को समझा जा सकता है क्योंकि ये दोनों एक दूसरे से जुड़े हैं। व्यापार एवं वाणिज्य एवं युद्ध तकनोलोजी का प्रसार एक दूसरे से जुड़ी हुई प्रक्रियाएं हैं।

5.3 वाणिज्य एवं व्यापार का पुनरुत्थान:

मध्ययुग में व्यापार एवं वाणिज्य के लिए अगणित कठिनाईयां थीं। मुद्रा की अत्यधिक कमी ही नहीं थी बल्कि विभिन्न स्थान की मुद्राओं, तौल एवं माप में भी भिन्नता थी। इसी कारण से दूरवर्ती व्यापार में अत्यधिक कठिनाईयां एवं खतरे थे। लेकिन इन परिस्थितियों में परिवर्तन आया। व्यापार की शुरूआत हुई एवं उसमें निरन्तर तेजी आई। इन परिस्थितियों ने मध्ययुगीन समाज को बुनियादी तौर से प्रभावित करना प्रारम्भ किया।

मध्यकालीन से आधुनिक समय में संक्रमण में धन की बढोत्तरी एक बुनियादी कारण था। धन की बढोत्तरी का कारण व्यापार का प्रसार था। सभ्यता के विकास में दूरवर्ती व्यापार का अत्यधिक प्रभाव रहा है। व्यापार की यह बढोतरी सिर्फ आर्थिक ही नहीं थी। वाणिज्य ने सेतुओं का निर्माण किया जिसके माध्यम से विचार, माल एवं मनुष्यों ने यात्राएं कीं। भूमध्यसागर से व्यापारी उत्तर एवं पश्चिम के बर्बरों के लिए कलात्मक वस्तुएं, चित्र, पाण्डुलिपियां एवं आवश्यक मोटा सामान लेकर आये। इसी प्रकार यहां का सामान सभ्य संसार में पहुंचा। व्यापार ने अलगाव को समाप्त कर दिया।

धर्मयुद्धों ने व्यापार को अत्यधिक बढ़ावा दिया। हजारों की संख्या में यूरोप के लोगों ने मुसलमानों से अपनी पवित्र भूमि छीनने के लिए उपमहाद्वीप को पार किया। अपने अभियान के दौरान पूर्व की विलासी वस्तुओं ने उन्हें आकर्षित किया। बाद में यही लोग इन वस्तुओं के सबसे बड़े खरीददार बन गए। इनकी मांगों ने इन वस्तुओं के लिए बाजार का निर्माण किया। दूसरी तरफ बढ़ती हुई जनसंख्या ने भी इन वस्तुओं की मांग को बढ़ा दिया था।

व्यापार की दृष्टि से, धर्मयुद्धों के परिणाम अत्यधिक महत्वपूर्ण थे। इन युद्धों ने व्यापारियों एवं दूसरे वर्गों को सम्पूर्ण उपमहाद्वीप में फैलने का अवसर दिया। उन्होंने मुसलमानों के हाथ से भूमध्यसागरीय व्यापारिक मार्ग छीन लिया एवं पुन: इसे पूर्व एवं पश्चिम के मध्य एक महत्वपूर्ण व्यापारिक मार्ग बना दिया जो कि प्राचीन समय से रहा था।

ग्यारहवीं एवं बारहवीं शताब्दियों में भूमध्यसागर में व्यापार का पुर्नरुत्थान हुआ तो उत्तरी समुद्र में यह प्रथम बार सक्रिय हुआ। उत्तरी एवं बाल्टिक समुद्र का व्यापारिक केन्द्र फ़्लैन्डर्स में ब्रुग्स शहर था। जिस तरह दक्षिण में वेनिस पूर्व के साथ सम्बन्ध के लिए यूरोप का माध्यम था ठीक उसी तरह ब्रुग्स रूस स्केन्निवियन संसार के साथ सम्बन्ध के लिए था। उत्तर से माल लाते हुए व्यापारी दक्षिण के उन व्यापारियों से चैम्पगने के मैदान में मिलते थे जो दक्षिण से एल्पस को पार करके आते थे। इन मिलन स्थलों पर मेले लगते थे जिनमें महत्वपूर्ण स्थान थे- प्रोविन्स, बरसुर ओबे एवं टोयस।

यह तथ्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि बारहवीं सदी के पश्चात् किस प्रकार व्यापार के विकास ने मध्ययुगीन आत्मनिर्भर प्राकृतिक अर्थव्यवस्था को मुद्रा अर्थ व्यवस्था में परिवर्तित कर दिया। यहां हम उस व्यापार की ओर इंगित करना चाहते हैं जिसके प्रसार एवं विकास ने परिवर्तन ला दिया था। इन सालों में वाणिज्य यूरोप व्यापी हो गया था ठीक एक शताब्दी पश्चात् इसे संसार व्यापी बनना था।

वाणिज्य के क्षेत्र में सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रगति सामुद्रिक व्यापार में हुई। धर्मयुद्धों के प्रारम्भ होने से पूर्व वेनिश, जेनोवा, पीसान एवं नारमन के व्यापारियों ने भूमध्य सागर में मुस्लिम आधिपत्य को समाप्त कर दिया था। हैनरी पीरेन ग्यारहवीं सदी में भूमध्यसागरीय जल परिवहन के लिए पश्चिमी बन्दरगाहों के फिर से खुल जाने पर बल देते हैं। वे दसवीं सती में स्केन्डिनेवियन व्यापारियों के द्वारा उत्तरी सागर एवं रूस होते हुए बाल्टिक सागर से काले समुद्र तक व्यापारिक मार्गो के विकास पर काफी बल देते हैं। उनका निष्कर्ष यह है कि इसके कारण सामन्तवाद का पतन हुआ। लेकिन मैरिस डाब इस सिद्धान्त के सख्त विरोधी हैं। उनकी मान्यता है कि यह बाह्य तत्व था इसलिए इसकी भूमिका गौण थी।

5.4 जहाज निर्माण एवं नौपरिवहन में तकनीकी विकास:

सामुद्रिक व्यापार के विकास के साथ-साथ जहाज निर्माण एवं नौपरिवहन में प्रगति हुई। तकनीकी दृष्टि से समुद्री जहाजों में काफी निपुणता आई। उसके आकार बड़े होते चले गए। उनकी गति में तेजी आई जिससे माल शीघ्रता से अपने गन्तव्य स्थान पर पहुंचने लगे। अब जहाज कम से कम हवा के रुख पर निर्भर करने लगे। चुम्बकई सुई की खोज एवं कम्पास में उसके उपयोग ने नौपरिवहन में एक क्रान्ति ला दी। एस्ट्रोलेब (उच्चता मापने का एक यन्त्र) भी काम में लिया जाने लगा था। इन सब खोजों ने दूर दराज के क्षेत्रों के लिए सामुद्रिक व्यापार को सम्भव एवं आसान बना दिया।

जबकि सामुद्रिक व्यापार की तुलना में अन्तर्देशीय व्यापार की प्रगति कुछ मन्द थी क्योंकि इसके सामने खराब सड़कें एवं युद्ध, समुद्री डकैतियां एवं सामन्ती सरदारों द्वारा लगाये जाने वाले अगणित करों जैसी कठिनाईयां थीं।

5.5 मुद्रा एवं लेन-देन का विकास

विकसित हुए व्यापार की सबसे बड़ी मांग एक स्थायी मुद्रा एवं लेन-देन के विकास की थी। तेरहवीं सदी के अन्त तक परिस्थितियां बदलीं। वेनिश के चांदी के सिक्के (1192 ई0) एवं

फलोरेन्टाईन के सोने के सिक्के (1252 ई0) के ढाले जाने से इस दिशा में कुछ कार्य हुआ लेकिन कोई सुव्यवस्थित मुद्रा व्यवस्था स्थापित नहीं हो पायी।

व्यापार की बढोत्तरी के कारण धन की अत्यधिक आवश्यकता हुई। मुद्रा के लेन-देन के रास्ते में चर्च एक सबसे बड़ी बाधा थी, क्योंकि चर्च ने ब्याज कमाने पर प्रतिबन्ध लगा रखा था। चर्च का यह प्रतिबंध विकसित होते हुए व्यापार के लिए बाधा था। व्यापारियों ने इसका सामना करने का रास्ता निकाल लिया। इस तरह चर्च को अपनी शिक्षाओं को बढ़ते हुए व्यापार की आवश्यकताओं के अनुसार ढालना पड़ा। यह चर्च की शिक्षाओं पर पूंजीवादी भावना की विजय का घोतक है।

5.6 शहरों का उद्भव:

व्यापार के विकास का एक अत्यधिक महत्वपूर्ण प्रभाव है शहरों का उद्भव। इससे यह तात्पर्य कदापि नहीं है कि इससे पूर्व मध्ययुग में शहर नहीं थे। शहर तो थे लेकिन उनका चरित्र ग्रामीण था लेकिन पश्चातवर्ती विकसित शहरों का चरित्र इससे बिल्कुल भिन्न था। नए शहरों का उद्भव उन स्थानों पर हुआ जहां व्यापार तीव्र गति से विकसित हो रहा था। परिणामत: वे स्थान शहरों के रूप में विकसित हुए जो या तो व्यापारिक मार्गों पर या किसी नदी के मुहाने पर या फिर किसी उचित स्थान पर स्थित थे।

शहरों के उत्थान के बारे में हेनरी पीरेन (ए हिस्ट्री ऑव यूरोप) की मान्यता है कि एक तरफ उत्तरी इटली एवं प्रोवेन्स के "शहरों" में तो दूसरी तरफ फ्लेमिश क्षेत्र के "बुर्गस" में प्रथम व्यापारिक बस्ती स्थापित कीं गई ये दो क्षेत्र ऐसे थे जहां पर सर्वप्रथम शहरी जीवन दृष्टिगोचर हुआ। दसवीं शती में व्यापारियों ने इन "शहरों" एवं "बुर्गस" में अपनी बस्तियां स्थापित की। ग्यारहवीं शताब्दी में ये बस्तियां संख्या में बंटी, व्यापक एवं सुदृढ़ हुई। "बुर्गस" की तरह "शहर" में ये व्यापारिक बस्तियां प्रमुख भूमिका निभा रही थीं।

मध्ययुगीन शहरों में व्यापारियों के उत्थान से तात्पर्य था कि इसमें बसने वाले सामन्ती लोगों के साथ संघर्ष। सामन्तवादी वातावरण नियन्त्रणों से भरा था जबकि व्यापारिक गतिविधियों के कारण से शहरों का वातावरण स्वतन्त्र था। सामन्ती स्वामी शहरी भूमि को अपनी ग्रामीण भूमि की तरह मानते थे एवं ठीक उसी प्रकार से कर उगाहना चाहते थे। लेकिन व्यापारिक गतिविधियों के विकास एवं उनकी बस्तियों के उद्भव के पश्चात् इन शहरों में सामन्ती कानून कायदों एवं रीति-रिवाजों का चलना मुश्किल हो गया।

हेनरी पीरेन लिखते हैं कि इस अपरिवर्तनशील समाज में व्यापारियों के आगमन ने सम्पूर्ण जीवन को अस्त-व्यस्त कर दिया एवं हर क्षेत्र में वास्तविक क्रान्ति ला दी।

व्यापारिक बस्तियों की इन विशेषताओं के साथ-साथ इनका तीव्र गति से विकास आश्चर्यजनक है। व्यापार की बढोत्तरी से तात्पर्य था कि अधिक लोगों का शहरों की ओर बसने की इच्छा से आगमन। शहरों में व्यापारियों के अभाव ने दस्तकारों को अपनी ओर आकर्षित किया। अपने माल को बेचने एवं कच्चे माल की प्राप्ति के लिए वे शहरों की ओर आकर्षित हुए इस तरह व्यापार के साथ-साथ उद्योग ने भी अपने कदम रखने प्रारम्भ कर दिए थे। ग्यारहवीं

शताब्दी के अन्त तक ऊन में काम करने वाले जुलाहे गांव से शहर की तरफ फ्लैन्डर्स में आने शुरू हो गए थे एवं फ्लेमिश कपड़ा व्यापार यूरोप में अत्यधिक विकासशील उद्योग बन गया था।

व्यापारियों के सामने सामन्तवादी व्यवस्था एक प्रश्न-चिह्न बने खड़ी थी। उस व्यवस्था के कानून व्यापार के विकास में एक बाधा थे। इसलिए उन्होंने अपने फैलाव एवं सामन्ती अवरोधों को दूर करने के लिए अपने आपको संगठित किया उदाहरणार्थ लन्दन एवं थोड़े समय पश्चात् जर्मनी में "हैन्स" नामक सगंठन। सामन्तवादी व्यवस्था का तख्ता पलटने के लिए व्यापारियों ने अपने आपको "गिल्ड्स" में संगठित नहीं किया था बल्कि सामन्ती प्रतिबन्धों को ढीला करने के लिए ऐसा किया गया था क्योंकि ये व्यापार के फैलाव में बाधा थे। इन "गिल्ड्स" एवं "हैन्स" का व्यापार पर एकाधिकार था। जो व्यापारी इन संगठनों का सदस्य नहीं होता था उसे उस शहर में व्यापार नहीं करने दिया जाता था।

जर्मनी की प्रसिद्ध हेन्सिटिक लीन विभिन्न "हैन्सों" की एक यूनिट थी। इसके कई स्थानों पर व्यापारिक नाके थे जिनके अपने मालगोदाम के साथ-साथ किले भी थे, जो हालैण्ड से लेकर रूस तक फैले थे। इनका इतना प्रभाव था कि इनका पूरे संसार सहित उत्तरी यूरोप के व्यापार पर वास्तव में एकाधिकार था।

5.7 मध्यम वर्ग का उदय:

व्यापार के पुनरुत्थान एवं शहरों के उद्भव के साथ-साथ एक नए समूह का प्रादुर्भाव हुआ- वह था मध्यम वर्ग। इनका जन्म बिल्कुल नए वातावरण में हुआ था एवं जो बिल्कुल नये प्रकार का जीवन जी रहा था। उसका मुख्य कार्य खरीद-फरोख्त करना था। जिस प्रकार सामन्ती समाज में सामन्ती स्वामियों, अमीरों एवं धर्म गुरुओं का वर्चस्व था। ठीक उसी प्रकार परिवर्तित होती हुई परिस्थितियों में मध्यम वर्ग भी अपना स्थान बनाता जा रहा था। उसके निरन्तर बढ़ते हुए प्रभाव के पीछे एक शक्ति थी वह शक्ति थी धन की। उसे अपने धन की शक्ति के आधार पर सरकार एवं प्रशासन में महत्वपूर्ण साझेदारी थी। सामन्ती समाज में जिस प्रकार भूमि सम्पत्ति या दौलत का एक मात्र स्त्रोत थी। ठीक उसी प्रकार बदलती परिस्थितियों में मुद्राएं सम्पत्ति का एक नया स्त्रोत थी। इसी दौलत ने मध्यम वर्ग को आधार प्रदान किया एवं उसी को आधार बना कर उसने अपने लिए समाज में स्थान बनाया।

व्यापारी वर्ग का जन्म विरोधी परिस्थितियों में हो रहा था। वह तत्कालीन परिस्थितियों में बिल्कुल अजनबी था। उसकी स्थिति सामन्ती समय के अमीर से बिल्कुल भिन्न थी। अमीर एवं बहुसंख्यक किसान वर्ग में घनिष्ट सम्बन्ध थे। वे एक दूसरे से परिचित थे। जबकि व्यापारी के लिए परिस्थितियां बिल्कुल भिन्न थीं। अमीर एवं किसान दोनों ही उस पर अविश्वास करते थे। दोनों की स्थितियां भिन्न थी, एक का ग्रामीण वातावरण था एवं दूसरे का व्यापारिक। हेनरी पीरेन की मान्यता है कि व्यापारी एक गतिशील एवं सक्रिय तत्व था, देश का व्यापार उसके हाथों में था एवं परिवर्तन का वाहक था। मानव अस्तित्व के लिए उसका रहना आवश्यक नहीं था फिर भी वह वास्तव में सामाजिक प्रगति एवं सभ्यता का सन्देशवाहक था।

मध्यकालीन समाज नियन्त्रकों का युग था। प्रारम्भ में अमीर एवं धर्म गुरुओं की तरह व्यापारियों का एक संगठित वर्ग नहीं था। विभिन्न शहरों में इनके अलग समूह थे। पीरेन के

अनुसार इनमें वर्ग की भावना के स्थान पर स्थानीय भावना अधिक प्रबल थी। प्रत्येक शहर अपने आप में एक अलग इकाई था लेकिन धीरे-धीरे परिस्थितियों ने इन्हें संगठित किया। इस वर्ग की प्रथम समस्या यह थी कि अगणित सामन्ती करों को किस प्रकार समाप्त किया जाये। तेजी से परिवर्तित होती हुई स्थितियों में सामन्ती कानूनों के स्थान पर नए कानून लागू किए जायें क्योंकि ये सब व्यापार की प्रगति में बाधा बन रहे थे।

इन परिस्थितियों में "व्यापारिक गिल्ड्स" के रूप में व्यापारियों ने अपने आपको संगठित किया। शीघ्र ही इसके परिणाम इनको प्राप्त होने लगे। 1370 ई0 में अव्बेवाईल के नागरिकों को फ्रांस के राजा द्वारा विभिन्न प्रकार के विशेषाधिकार दिए गये। इस आदेश के अनुसार व्यापारियों को करों में छूट मिली जो व्यापारी चाहते थे। ये सब सफलताएं "गिल्ड्स" एवं ' 'हैन्स' ' को प्राप्त हुई थीं।

इस प्रकार व्यापारियों एवं शहरों ने कई प्रकार के अधिकारों को प्राप्त किया था। यह बढ़ते हुए व्यापार के महत्व का परिचायक है। शहरों में निरन्तर व्यापारियों का बढ़ता हुआ प्रभाव इस बात का प्रमाण था कि शहरों में भू-सम्पत्ति के स्थान पर धन-दौलत का वर्चस्व स्थापित होता जा रहा था। यह मध्यम वर्ग के बढ़ते हुए प्रभाव एवं वर्चस्व से प्रमाणित होता जा रहा था। इसके साथ ही सामन्ती व्यवस्था की चरमराहट भी स्पष्टत: दृष्टिगोचर होती ना रही थी।

5.8 किसान विद्रोह:

सामन्तवादी व्यवस्था में किसान की स्थिति में किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं आ रहा था। लेकिन धीरे-धीरे व्यापार के विकास, मुद्रा-प्रसार एवं बढ़ते हुए शहरों के कारण से आशा की किरण दिखाई देने लगी। इन सबका प्रभाव यह हुआ कि बाजार का तीव्र गति से फैलाव हुआ। बाजार के फैलाव ने ग्रामीण उत्पादकों की मांग को तीव्र गति से बढ़ा दिया।

बारहवीं सदी में पश्चिमी यूरोप के किसानों ने इस बढ़ती हुई मांग का उत्तर जंगलों एवं चरागाहों को साफ करके दिया। किसान ने अपनी मेहनत से कृषि उत्पादन में बढोतरी की एवं उस उत्पादन को बाजार में बेचना प्रारम्भ कर दिया।

लेकिन इस कृषि-भूमि विस्तार का एक अत्यन्त भयानक प्रभाव भी हुआ। इससे प्राकृतिक संतुलन बिगड़ गया। परिणामत: अकालों के भयंकर चक्र की शुरूआत हो गई। निरन्तर अकालों की चपेट में जनसंख्या का एक बहुत बड़ा हिस्सा आ गया। चरागाहों की बर्बादी का असर पशुधन पर पड़ा। पशुधन की बर्बादी से खाद का संकट उत्पन्न हो गया। परिणामत: कृषि उत्पादन में अप्रत्याशित गिरावट आई।

जनसंख्या पर सबसे भयंकर आक्रमण 1348-51 की "काली मौत" ने किया। यह एक ऐसी महामारी थी जिसमें यूरोप की चौथाई एवं कहीं-कहीं तो आधी जनसंख्या का सफाया कर दिया। इतने बड़े पैमाने पर जनसंख्या की कमी का असर श्रमिकों के अभाव के रूप में सामने आया। इसका असर मजदूरों की मजदूरी एवं कृषि-उत्पादों की कीमतों पर पड़ा। मजदूरों की संख्या में कमी की वजह से उनकी मज़दूरी में बढोत्तरी हो गई लेकिन दूसरी तरफ मांग की कमी के कारण कृषि उत्पादनों की कीमतों में गिरावट आई। लेकिन धीरे-धीरे सिर्फ उपजाऊ भूमि

पर कृषि के कारण उत्पादन में वृद्धि हुई लेकिन मांग बराबर घटती रही। इन परिस्थितियों में मजदूरों को बहुत लाभ हुआ। उनकी मजदूरी तो लगातार बढ़ती रही लेकिन दूसरी तरफ कृषि उत्पादनों की कीमतें कम हो रही थीं। भू-स्वामी पर इसका बुरा असर पड़ा। एक तरफ तो उसकी आय में कमी आई तो दूसरी तरफ उसे अब भोग-विलास की वस्तुओं पर अधिक खर्च करना पड़ रहा था क्योंकि बहुत बड़ी संख्या में दस्तकार मौत के मुंह में समा चुके थे।

इस शोषण का उत्तर किसान ने भाग कर एवं विद्रोह करके दिया। पन्द्रहवीं सदी के इन किसान विद्रोहों ने फ्रांस, इंग्लैण्ड, स्पेन एवं जर्मन राज्यों को हिला कर रख दिया। यद्यपि इन विद्रोहों को कुचल दिया गया लेकिन सदी के अन्त में राज्य की सामन्तवादी प्रतिक्रिया के ठण्डी पड़ जाने के कारण किसानों पर अंकुश लगाना सम्भव नहीं हो- सका। अन्त में, चौदहवीं एवं पन्द्रहवीं सदी के यूरोपीय सामन्तवादी अर्थ व्यवस्था के संकट ने सामन्तवाद के पतन एवं पूंजीवाद के आगमन का मार्ग प्रशस्त किया।

5.9 राष्ट्र-राज्यों का उत्थान:

पन्द्रहवीं सदी में राष्ट्र राज्यों का उत्थान सामन्तवादी व्यवस्था के लिए सबसे बड़ा खतरा बन कर सामने आया था। राज्य सीमाओं का सीमांकन अधिक स्पष्ट होता जा रहा था। राष्ट्रीय भावना का प्रभाव सभी क्षेत्रों में सुस्पष्ट रूप से झलक रहा था। लोगों की भक्ति राष्ट्र एवं उसके सम्राट से अधिक थी न कि किसी शहर या प्रान्त से। लोग इंग्लैण्ड, फ्रांस एवं स्पेन के नागरिक कहलाने में अधिक गौरव समझते थे।

मध्यवर्ग के उत्थान ने राष्ट्र-राज्यों के निर्माण में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की। मध्ययुगीन समाज की अराजकता उनके व्यापार के लिए सबसे बड़ा खतरा थी। इसलिए वे अपने व्यापारिक लाभों के लिए सुरक्षा एवं व्यवस्था चाहते थे। इसके लिए उन्हें सहयोगी ढूंढने थे क्योंकि सामन्ती स्वामी तो उनके व्यापार के लिए बाधा थे ।

शहरों में व्यापारियों ने सामन्ती स्वामियों के प्रतिबन्धों के विरुद्ध परिस्थितियां तैयार की। इसमें राजा ने उनका साथ दिया। व्यापारियों ने बदले में सम्राटों की आर्थिक सहायता की। इन सम्राटों ने एक नियमित सेना का संगठन किया। नियमित सैनिकों की भर्ती की जाने लगी एंव उन्हें नकद रोजगार दिया जाने लगा। ये सैनिक व्यावसायिक दृष्टि से सामन्ती सैनिकों से अधिक निपुण थे।

5.10 बारूद का प्रयोग

इसके अतिरिक्त सैनिक हथियारों में तकनीकी सुधारों ने भी सम्राटों की शक्ति को बढ़ा दिया। बारूद एवं तोपों के प्रयोग ने सेना की दक्षता को अधिक बढ़ा दिया। सबसे महत्वपूर्ण बात सम्राट का बारूद पर पूर्ण एकाधिकार था। इस एकाधिकार ने- दुहरा कार्य किया। एक तरफ तो सम्राट को सर्वशक्तिमान बना दिया तो दूसरी तरफ सामन्ती स्वामियों की कमजोरी को पूर्णत: उजागर कर दिया। अब सामन्ती किलों का महत्व समाप्त हो गया।

5.11 केन्द्रीय शक्ति की स्थापना:

केन्द्रीय शक्ति की स्थापना इस सदी की एक महान् उपलब्धि थी। इस केन्द्रीयकरण का लाभ व्यापारियों को अत्यधिक हुआ। सम्राट भी अपने शक्ति के आधार को अच्छी तरह से

पहचानते थे। वे जानते थे कि उनकी शक्ति इस बात पर निर्भर करती है कि व्यापार एवं उद्योगों का अधिक से अधिक विकास हो। इसीलिए उन्होंने व्यापार को अधिक से अधिक प्रोत्साहन दिया। इस दौर में शहरों की एकाधिकारी प्रवृत्ति पर पूरे तौर पर अंकुश लगाया गया। आर्थिक जीवन में शहरों का स्थान फ्रांस, इंग्लैण्ड एवं स्पेन जैसे राज्यों ने ले लिया।

पैरी एन्डरसन की मान्यता है कि निरकुंश राज्यतन्त्रों ने नियमित सेनाएं, स्थायी नौकरशाही, राष्ट्रीय कर-व्यवस्था, समान कानून एवं संगठित बाजार की शुरूआत की। ये सभी विशेषताएं मुख्यत: पूंजीवादी लगती थी। (Lineages to the Absolute State)।

किसान, दस्तकार, एवं व्यापारी सभी ने राज्यों के निर्माण का स्वागत किया क्योंकि यह सभी के लिए लाभकारी था। कर-व्यवस्था, तोल-माप एवं कानून व्यवस्था में एकरूपता कायम हुई। स्थानीयता की जगह राष्ट्रीयता ने ले ली। राष्ट्र्यता की भावना इतनी प्रबल थी कि वह साहित्य, कला एवं जीवन के हर क्षेत्र में प्रतिबिम्बित हो रही थी।

मध्य वर्ग के विकास के मार्ग में चर्च एक बड़ी बाधा था। सामन्तवाद के सफाये के लिए आवश्यक था कि उसके एक शक्तिवान आधार चर्च का नष्ट किया जाना। प्रोटेस्टेन्ट सुधार आन्दोलन मध्य वर्ग के नेतृत्व में लड़ी गई एक ऐसी धार्मिक लड़ाई थी जो अप्रत्यक्ष रूप से सामन्तवाद पर एक करारा आक्रमण था। इसमें मध्य वर्ग को सफलता इसलिए मिली क्योंकि राष्ट्रीय राज्यों एवं चर्च के मध्य संघर्ष चल रहा था। अन्तत: इन सब परिस्थितियों ने सामन्तवाद के पतन के लिए मार्ग प्रशस्त कर दिया।

इस तरह पूंजीवाद के आगमन के साथ-साथ सामन्तवाद का पतन हुआ। सामंती स्वामियों एवं नाइट्स का सैनिक एवं राजनैतिक प्रभाव कम होता चला गया। भू-स्वामी एवं किसान के सम्बन्धों में परिवर्तन आया। गांवों में मुद्रा बड़ी तादाद में प्रयोग की जाने लगी। अर्धदास की स्थिति बदल गयी। भू-स्वामी अब मजदूरों को नकद मजदूरी पर रखते थे। इस प्रकार फ्रांसीसी टिनेन्ट "सेन्सियर" एवं "अंग्रेज टिनेन्ट" "कापीहोल्डर" बन गया।

मुद्रा व्यवस्था के विकास का अर्धदास व्यवस्था पर गहरा प्रभाव पड़ा। अब अर्धदास को अपनी स्थिति सुधारने के लिए इधर-उधर मांगना पड़ता था। बल्कि वह अब मुद्रा के द्वारा अपनी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता हासिल कर सकता था। इसका परिणाम यह हुआ कि पश्चिमी यूरोप में चौदहवीं एवं पन्द्रहवीं सदी में अर्धदास व्यवस्था धीरे-धीरे समाप्त हो गई, लेकिन पूर्वी यूरोप में यह जारी रही।

5.12 सारांश

इस प्रकार संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि सामन्तवादी व्यवस्था के पतन के लिए कई तत्व उत्तरदायी हैं। इसमें व्यापार के विकास, नौपरिवहन में तकनोलोजिकल प्रगति, मुद्रा एवं लेनदेन में विकास, शहरों के उद्भव, मध्यवर्ग के उत्थान, स्वामियों द्वारा किसानों का शोषण परिणामस्वरूप किसान विद्रोह एवं राज्यतन्त्रों का विकास आदि महत्वपूर्ण हैं। बारूद के प्रयोग एवं उस पर एकाधिकार ने राज्यतंत्रों को सामन्ती राज्यों के दमन का अवसर प्रदान किया। दूसरी तरफ मुद्रा सम्बन्धों की वापसी से अर्धदासों की न केवल मुक्ति का द्वार खुला बल्कि श्रम किराये के स्थान पर नकद किराये ने सम्पूर्ण परिस्थितियों को परिवर्तित कर दिया।

अर्धदास किरायेदार (Tenant) व सामन्ती स्वामी भू-स्वामी बन गया। दोनों के सम्बन्ध में बुनियादी परिवर्तन आया। सामन्ती समाज के इस संकट ने नई आधुनिक व्यवस्था को जन्म दिया।

5.13 प्रश्न अभ्यास

1. यूरोप में सामन्तवाद के पतन के लिए कौन से तत्व उत्तरदायी हैं? विस्तार से वर्णन कीजिए।
2. यूरोप में आधुनिक समाज के उत्थान की प्रक्रिया को रेखांकित कीजिए।
3. मध्यवर्ग का उत्थान यूरोपीय -सामन्तवादी व्यवस्था के लिए सबसे बड़ा खतरा था। व्याख्यायित कीजिए।
4. व्यापार के विकास की प्रक्रिया सामन्तवाद के पतन की प्रक्रिया की शुरूआत थी। इस कथन के पक्ष-विपक्ष में तर्क दीजिए।
5. किसान-विद्रोहों एवं शहरों के उद्भव ने नए समाज के बीज बो दिए थे। व्याख्या कीजिए।

5.14 सन्दर्भ ग्रंथ

1. सी. जे. एच. हेज - मार्डन यूरोप टू 1870
2. सी. जे. एच हेज - हिस्ट्री ऑव द मेडिवल एजे (284-1500 A.D.)
3. एडवर्ड पी चैने - द डान ऑव द न्यू एरा
4. हेनरी पीरेन- हिस्ट्री ऑव यूरोप (नौवां अध्याय)

MAHI-01/ISBN13/978-81-8496-260-4